thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 03 अगस्त 2014 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार 03 अगस्त 2014 से 09 अगस्त 2014

श्रा. शु. 07 ● वि० सं०–2071 ● वर्ष 79, अंक 119, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 191 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,115 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. देहरा में चेतना शिविर का आयोजन किया गया

डी.ए.वी. विद्यालय देहरा के प्रांगण में त्रिदिवसीय वैदिक चेतना शिविर का शुभारंभ हुआ जिसके मुख्यातिथि केन्द्रीय विश्वविद्यालय (हि.प्र.) के उपकुलपति श्री योगेन्द्र वर्मा रहे एवं स्थानीय प्रबन्धक समिति के सदस्य व क्षेत्र के गणमान्य व्यक्ति भी सम्मिलत हुए। यज्ञ की आहुतियों द्वारा कार्यक्रम का शुभारंभ किया गया। मुख्यातिथि महोदय ने अपने अमूल्य शब्दों द्वारा विद्यालय की इस गतिविधि को चार चाँद लगा दिए। उन्होंने चरित्र के निर्माण से सम्बन्धित विचारों से विद्यार्थियों को अवगत करवाया।

चरित्र में प्रेम को सर्वोपरि मानते हुए उन्होंने उसके महत्व पर प्रकाश डाला और बताया कि क्रोध न करके प्रेम से हर घृणा को मिटाया जा सकता है। भजन गायक व उपदेश श्री सुरेश कुमार व विपिन कुमार ने चरित्र एवं मातृ–पितृ सेवा भाव से सम्बन्धित भजनों से विद्यालय के प्रांगण को गुँजायमान किया। समापन समारोह पर उपमण्डलाधिकारी (नागरिक) श्री विनय शर्मा मुख्यातिथि के रुप में विराजमान हुए। यज्ञ के पश्चात मुख्यातिथि ने अपने भाषण में जीवन की सफलता में माता–पिता एवं गुरु का स्थान सर्वोपरि बताया। नकारात्मक सोच को त्याग कर सकारात्मक सोच को अपनाने पर बल दिया। प्रबन्धक समिति के सदस्य श्री नवल किशोर जी ने विद्यालय परिवार समस्त विद्यार्थियों एवं अभिभावकों का इस कार्यक्रम में सहयोग देने के लिए धन्यवाद किया।

दयानन्द मॉडल स्कूल, मन्दिर मार्ग में नैतिक शिक्षण पर हुई कार्यशाला

दयानन्द मॉडल स्कूल, मन्दिर मार्ग व आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग में नैतिक शिक्षण प्रशिक्षण कार्यशाला का आयोजन किया गया। डी.ए.वी. के 13 विद्यालयों से आए धर्म शिक्षक व धर्म शिक्षिकाओं की उपस्थिति में आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग हॉल में मन्त्रोच्चारण, दीप प्रज्वलन व डी.ए.वी. गान के साथ कार्यशाला का शुभारम्भ हुआ। कार्यशाला में आए सभी अतिथियों – श्री रविन्द्र कुमार (सचिव, डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्त्री समिति), श्री रामनाथ सहगल (उपप्रधान, डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्त्री समिति), श्री अजय सूरी (कार्यवाहक प्रधान, आर्यसमाज (अनारकली) मन्दिर मार्ग), ब्रि. ए.के.अदलखा मन्त्री, आर्यसमाज (अनारकली) आदि का हार्दिक स्वागत किया गया।

प्रथम सत्र की अध्यक्षता श्री रविन्द्र कुमार जी द्वारा की गई। श्रीमती चित्रा नाकरा जी ने ''विद्यार्थियों के चरित्र निर्माण में धर्मशिक्षक की भूमिका'' विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने किस प्रकार धर्मशिक्षक/धर्मशिक्षिकायें अपने कर्तव्य का पालन कर सकते हैं, इसकी जानकारी दी जो ज्ञानवर्धक रही। श्री एस के शर्मा जी ने'' आज के परिवेश में धर्मशिक्षा का महत्व व धर्मशिक्षकों का उत्तरदायित्व'विषय पर अपने विचार रखे। उन्होंने शिक्षकों को विद्यार्थियों के लिए ''रोल मॉडल'' बनने की प्रेरणा दी। श्रीमती रश्मि कपूर ने ''जीवन शैली और हमारा स्वास्थ्य'' विषय पर अपने विचार रखे व सम्बन्धित योग आसन भी सिखाए जो काफी लाभकारी रहे। अन्त में श्री रविन्द्र कुमार जी ने सभी को आशीर्वाद दिया।

दूसरे दिन श्री अजय सूरी जी की अध्यक्षता में प्रथम सत्र आरम्भ हुआ। श्रीमती रश्मि कपूर ने ''योग तनावमुक्ति का साधन'' विषय पर अपने विचार रखे व सम्बन्धित योग आसन

भी सिखाये। द्वितीय सत्र की अध्यक्षता ब्रि. ए.के अदलखा जी द्वारा की गई। डॉ. छवि कृष्ण आर्य जी ने ''नैतिक शिक्षा और उसका प्रभावशाली शिक्षण'विषय पर अपने विचार रखे। श्री अजय सूरी जी तथा ब्रि. ए.के अदलखा जी ने सभी को आशीर्वाद दिया और कार्यक्रम की सफलता के लिए बधाई दी।

दयानन्द मॉडल स्कूल, मन्दिर मार्ग की प्राधानाचार्य श्रीमती स्नेह मोहन ने कार्यक्रम की सफलता पर सबको हार्दिक धन्यवाद दिया।

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कुकटपल्ली हैदराबाद में हुआ यज्ञ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल कुकटपल्ली में श्री जे.पी.शूर (डायरेक्टर, पी.एस, डी.ए.वी. कॉलेज मैनेजिंग कमेटी नई दिल्ली) तथा दक्षिण विभाग की निर्देशिका श्रीमती सीता किरणजी तथा डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल दक्षिण विभाग के मैनेजर पी.जी. शास्त्री जी एवं अन्य सदस्य गण के द्वारा लोकल मैनेजिंग कमेटी की बैठक का शुभारंभ यज्ञ के द्वारा किया गया। इस अवसर पर स्कूल की प्रधानाचार्या श्रीमती वसंता एस रामण जी एवं स्कूल के अध्यापकगण उपस्थित थे। हवन के पश्चात चित्रकला प्रदर्शन का आयोजन किया गया तथा लोकल मैनेजिंग कमेटी की बैठक सफल रूप से संपन्न हुई। विद्यालय की प्रधानाचार्या ने जे.पी. शूर जी का तथा अन्य सदस्यों का आभार व्यक्त किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – श्री पूनम सूरी

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार 03 अगस्त, 2014 से 09 अगस्त, 2014

हम तेरे सम्मुख मूढ़ हैं

●डॉ. रामनाथ वेदालंकार

मूरा अमूर न वयं चिकित्वो, महित्वमग्ने त्वमङ्ग वित्से।
शये वव्रिश्चरति जिह्वयाऽदन्, रेरिह्यते युवतिं विश्पतिः सन्।।

ऋग् १०.४.४

ऋषिः **त्रितः आप्त्यः**। देवता **अग्निः**। छन्दः **त्रिष्टुप्**।

● **(अङ्ग)** हे, **(अमूर)** अमूढ़, **(चिकित्वः)** ज्ञानी, **(अग्ने)** परमेश्वर!, **(मूराः)** मूढ़, **(वयं)** हम, **(महित्वं)** महत्ता को, **(न)** नहीं [जान पाते]।, **(त्वं)** तू, **(वित्से)** जानता है। [हमारा], **(वव्रिः)** रूपवान् आत्मा, **(शये)** सोया पड़ा है, **(जिह्वया)** जिह्वा [आदि इन्द्रियों] से, **(अदन्)** भोग करता हुआ, **(चरति)** विचरता है, **(विश्पतिः सन्)** राजा होता हुआ [भी], **(युवतिं)** प्रकृति–रूप युवति को, **(रेरिह्यते)** अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है।

● हे अग्ने! हे तेजोमय ज्ञानी प्रभु! हम मूढ़ हैं, तुम अमूढ़ हो। हम तो यह भी नहीं जानते कि 'महत्ता' किसका नाम है, महत्त्व प्राप्त करना किसे कहते हैं। हम तो समझते हैं कि सांसारिक दृष्टि से महिमाशाली होना, हाथी, घोड़े, रथ, सेवक आदि का स्वामी हो जाना ही महत्ता है। हमारा तो विचार है कि नचिकेता को यम ने जिस सांसारिक धन–दौलत, पुत्र–पौत्र, भूमि के राज्य आदि सम्पत्ति के प्रलोभन में फँसाना चाहा था, उस सम्पत्ति को पा लेना ही महत्ता है। पर हम मूढ़ अज्ञानियों के ऊपर रहनेवाले अमूढ़ ज्ञानी तुम जानते हो कि सच्ची 'महत्ता' क्या है।

हमारा रूपवान् आत्मा सोया पड़ा है, उसे यही चेतना नहीं है कि मैं किसलिए इस शरीर में आया हूँ, मेरा लक्ष्य क्या है मुझे किधर जाना है। वह जिह्वा आदि इन्द्रियों से निरन्तर भोगों को भोगने में आसक्त हुआ विचर रहा है और इस भोग भोगने में ही अपने जीवन की इतिश्री मान बैठा है। भगवान् ने उसे 'विश्पति' बनाया है, शरीर–नगरी का राजा बनााया हैं, जिसमें मन, बुद्धि, प्राण, इन्द्रियाँ आदि अनेक प्रजाएँ निवास करती हैं। उसे इस शरीर–नगरी को ईश्वरीय साम्राज्य बनाना चाहिए था, अध्यात्म–साधना द्वारा आध्यात्मिक दृष्टि से उन्नत राष्ट्र बनाना चाहिए था। शरीर–राष्ट्र को भोगों से जर्जर न कर सबल, सप्राण और समनस्क करना चाहिए था। पर धिक्कार है इस आत्मा को! यह तो एक 'युवति' को चाट रहा है, अतिशय पुनः–पुनः चाट रहा है। प्रकृति ही यह युवति है जो नटी बनकर आत्मा को अपने साथ नचा रही है, भोग भुगा रही है। आत्मा प्रकृति को चाट रहा है, प्रकृति आत्मा को चाट रही है। इस प्रकार आत्मा लौकिक भोग–विलासों में आनन्द ले रहा है।

हे मेरे आत्मन्! इस मूढ़ता को त्यागो, अपने अन्दर ज्ञान की ज्योति जगाओ, 'सच्ची महत्ता क्या है' इसे जानो, सोते से उठ खड़े हो, इन्द्रियों के वशीवर्ती न हो, अपितु इन्द्रियों के स्वामी बनो। प्रकृति को न चाटकर परम प्रभु के अमृत–रस का आस्वादन करो। तुम्हारा उद्धार होगा, तुम महिमाशाली बन जाओगे। ❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

दो रास्ते

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में हमने पढ़ा कि यदि भक्त के प्यार में सच्चाई है तो प्रभु भी उसके लिए पागल होते हैं, क्योंकि प्रभु लोहे या पीतल की मूर्ति नहीं–वह जीती–जागती अनुभव करने वाली शक्ति है। स्वामी जी ने आज के विज्ञान का हवाला देते हुए यह बताया कि अब तो विचार की तस्वीर भी लेनी आरम्भ हो गयी है। आपके मन में जो विचार उठता है वह पत्थर से पानी में उठती लहरों के समान वातावरण में आगे बढ़ता है और भगवान् जो सर्वव्यापक है उसके पास भी पहुंच जाता है। उन्होंने बताया कि प्रेमा–भक्ति से जब भीतर सोम–गुण जाग उठता है तो भक्त हंसता रहता है, और कई बार तो पागलों की तरह भी हंसता है। इस बात को प्रमाणित करने के लिए उन्होंने ब्रितानिया में 'कोल रिंग अस्पताल' में हुए अपने अनुभव की बात की और फिर मूलशंकर के मन में उठे प्रभु के प्यार का वर्णन करते हुए नर्मदा के तट पर उनके भ्रमण की बात सुनाई कि वे कैसे शुद्ध चैतन्य और फिर संन्यासी बन गये। स्वामी जी ने कहा, मंजिल को पाने के लिए तप करना पड़ता है और जो तप नहीं करता, उसे मंज़िल कभी नहीं मिलती।

इसके बाद उन्होंने फिर श्रेय और प्रेयमार्ग की बात आरम्भ की और बताया कि हर फूल का बीज अलग है और हर बीज उन परमाणुओं को अपनी ओर खिंचता है जो उसके लिए निश्चित हैं। प्रकृति अपने कानून को कभी नहीं तोड़ती। दुनिया–भर के वैज्ञानिक जोर लगा लें तब भी नियम कभी नहीं बदलेगा। जैसा बीज होगा, वैसा ही पौधा उगेगा, वैसा ही फल लगेगा।

अब आगे......

परन्तु वाह रे इन्सान! तूने सब कायदे–कानून तोड़ डाले। तूने प्रकृति से कुछ सीखा न पशुओं से। मत सीखो। भाई! परन्तु याद रखो, जो कानून तोड़ता है उसे दण्ड अवश्य मिलता है। आज का इन्सान यदि दुःखी है तो इसलिए कि उसने सृष्टि के राजा का कानून मानने से इन्कार कर दिया है, प्रकृति के कानून–कायदों को तोड़ना आरम्भ कर दिया है।

मैं अमेरिका में था तो एक भाई ने पूछा, ''हमने विज्ञान में बहुत उन्नति की है, दौलत बहुत कमाई है, फिर भी हम दुःखी क्यों हैं?''

मैंने उत्तर दिया– ''इसलिए कि तुमने प्रकृति के कानून को भुला दिया है, भगवान् के विधान को तोड़ने का यत्न आरम्भ कर रखा है। ऐसा करोगे तो दण्ड मिलेगा ही।''

है न यह विचित्र बात कि इन्सान को सब लोग 'अशरफूल–मखलूकात कहते हैं, प्राणियों में सबसे श्रेष्ठ, और यही उस परमात्मा के कानून–कायदों को तोड़ने का यत्न कर रहा है जिसने इस सृष्टि को बनाया, इसके लिए विधान निश्चित किया, कानून और कायदे बनाए।

'महाभारत' का ऋषि कहता है–

गुह्यं ब्रह्म तदिदं वो ब्रवीमि
न हि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्।

'सुनो! यह छुपी हुई सचाई बताता हूँ कि इन्सान से ज्यादा श्रेष्ठ इस दुनिया में कुछ भी नहीं।'

परन्तु यह क्या श्रेष्ठता हुई कि बेजान प्रकृति जिन कानून–कायदों के अनुसार चलती है, सोचने की शक्ति से शून्य पशु जिन कानून–कायदों (नियमों) पर चलते हैं, उनके अनुसार भी तुम नहीं चलते? इन बेजान फूलों, पौधों, वृक्षों से तुमने कुछ नहीं सीखा, पशुओं से भी कुछ नहीं सीखा।

एक माँ बोली–''मैंने पशुओं से सीखा है, स्वामी जी!''

मैंने पूछा–''क्या सीखा है?''

वह बोली–कुत्ते की दुम पर पाँव आ जाय तो वह पाँव रखने वाले का काट लेता है मुझे भी कोई तंग करे तो मैं भी काट लेती हूँ।

मैंने हँसते हुए कहा–''तुमने केवल काटना ही सीखा है माँ! कोई अच्छी बात क्यों नहीं सीख ली?''

यह तो प्रकृति से सीखना नहीं है मेरे भाई! प्रकृति से सीखना है तो इस सूर्य को देखो जो ठीक समय पर उदय होता और ठीक समय पर अस्त होता है। इस पृथिवी से सीखों जो करोड़ों शताब्दियों से निरंतर एक ही गति से अपनी कीली पर है घूमती है और सूर्य के गिर्द भी। इस चाँद से सीखो जो सदा ठण्डक ही देता है, इन तारों और सितारों से सीखो जो आकाश के अनन्त विस्तार में 'ओम्, ओम्, कहते हुए हजारों–लाखों मील प्रति

thearyasamaj.org

घण्टा की गति से दौड़ रहे हैं और कभी एक दूसरे से नहीं टकराते। मोटरें हैं, रेलगाड़ियाँ टकराती हैं, आकाश में हवाई जहाज् भी टकराते हैं। कई बार समुद्र में समुद्री जहाज भी टकरा जाते हैं। सदा वे टकराते हैं चलाने वाले आदमियों की भूल से। परन्तु क्या आपने कभी यह भी देखा कि कोई तारा किसी दूसरे तारे से टकरा गया हो? कभी ऐसा नहीं होता। पौने दो अरब वर्ष बीत गए इस ब्रह्माण्ड को बने। हमारे सूर्यमण्डल के अतिरिक्त डेढ़ अरब दूसरे सूर्यमण्डल इसमें हैं। कभी इसमें किसी सूर्यमण्डल का कोई तारा हमारे सूर्यमण्डल में नहीं आया, कि चलो भाई! इस पड़ोसी मुहल्ले की सैर भी कर आएँ। सब अपनी–अपी राह पर चल रहे हैं, एक पल के लिए भी रुकते नहीं; परन्तु अपनी राह से भी बेराह नहीं होते।

यह है नियम में, कानून और कायदे के अनुसार चलना।

और यही 'राजानम्' का भी अर्थ है–विधान के अनुसार, कानून के अनुसार, नियम के अनुसार चलना। हर मनुष्य को चाहिए कि अपने लिए कोई नियम, कोई कानून बनाए। कितनी देर तक उसे सोना है, कितने बजे प्रातः उठना है, कितने घण्टे काम करना है, कितने घण्टे लोगों की सेवा करना है ,कितने घण्टे आर्यसमाज के लिए या किसी दूसरी लोक–सेवक संस्था के लिए दौड़ भाग करनी है।, कितने घण्टे प्रभु–भजन में बिताने हैं कितनी बार खाना है, किस समय खाना है। यह नहीं कि हर समय खाते ही रहो, जब भी खाने को कुछ मिले तभी खाना आरम्भ कर दो।

मैंने सुना है कि यहाँ करोलबाग में एक दुकान पर 'डोसे' या 'समोसे' बहुत अच्छे बनते हैं। उनके साथ वह भी मिलती है क्या कहते हैं उसे?

एक भाई ने कहा, ''इडली।'' स्वामीजी बोले, ''हाँ शायद ऐसा ही कुछ नाम सुना था मैंने।'' उसी भाई ने कहा, ''वह मदरासी खाना है।''

स्वामी जी बोले–मदरासी हो या पंजाबी, इसमें फर्क नहीं पड़ता, परन्तु खाने का कोई समय होना चाहिए, हर बात का समय होना चाहिए, हर बात का नियम; हर समय हर बात करते रहना ठीक नहीं है।

प्रकृति का कानून यह है कि प्रतिदिन तुम्हारे शरीर के अन्दर एक अनमोल रत्न तैयार होता है, उसे सँभाल के रखो। जो लोग उसे सँभाल–कर रखते हैं वे बुढ़ापे में भी जवान बने रहते हैं। जो उसे नष्ट करते हैं उनके लिए जवानी में ही बुढ़ापा आ जाता है। परन्तु आज इस बात को सुनता कौन है! लोग कहते हैं कि ये पुराने युग की बातें हैं। परन्तु पुराने की हों या नए युग की, यह प्रकृति का नियम है। आज करोड़ों वर्ष पहले जिस प्रकार सूर्य की धूप गर्मी देती थी, आज भी वैसे ही देती है। आज से करोड़ों वर्ष पहले 'ब्रह्मचर्य' के सम्बन्ध में जो बात सच थी, वह आज भी सच है। समय बदलता है, प्रकृति के नियम नहीं बदलते, भगवान् का विधान नहीं बदलता। अथर्ववेद का एक मन्त्र है–

''ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमुपाघ्नत।''

'ब्रह्मचर्य से और तप से विद्वान् लोगों ने मौत (मृत्यु) को जीत लिया।'

कई गृहस्थी कहते हैं कि साहब! यह ब्रह्मचर्य की बात या तो ब्रह्मचारियों के लिए है। या वानप्रस्थियां और संन्यासियों के लिए, गृहस्थ में ब्रह्मचर्य चल नहीं सकता।

मैं कहता हूँ यह बात बिल्कुल गलत (असत्य) है। महर्षि दयानन्द 'सत्यार्थ प्रकाश' में कहते हैं कि जो पति–पत्नी केवल 'ऋतु' के अनुसार व्यवहार करते हैं, मास में केवल एक बार मिलते हैं, वे ब्रह्मचारियों जैसे हैं उनका ऐसा करना ही ब्रह्मचारियों जैसा हैं। उनका ऐसा करना ही ब्रह्मचर्य है।

गृहस्थाश्रम का अर्थ यह नहीं कि आपको अपना और अपनी पत्नी का या अपने पति का सर्वनाश करने के लिए परमिट मिल गया है। गृहस्थाश्रम इसलिए है कि पति पत्नी को और पत्नी पति को सुखी रखने का यत्न करे। जीवन की यात्रा लम्बी है, इसमें एक साथी हमारे साथ रहे, इस कारण गृहस्थ को आरम्भ किया; सर्वनाश के लिए नहीं किया गया।

यूनान में एक विख्यात दार्शनिक 'पैथागोरस' हुई हैं। वे गणित के पण्डित थे, ज्योमैट्री के भी, आयुर्वेदिक के भी और फलसफे के भी।

उनसे एक बार किसी ने पूछा–''विवाह होने के पश्चात् पति–पत्नी को शारीरिक तौर पर एक–दूसरे से कितनी बार मिलना चाहिए?''

पैथागोरस ने कहा– ''जीवनभर में एक बार।''

पूछनेवाले ने कहा–''यदि इससे सन्तोष न हो?''

और यह सन्तोष की बात भी अजीब है। सन्तोष से कितना सुख होता है, इसे वही लोग जानते हैं जिन्होंने सन्तोष को अपने मन में और जीवन में धारण किया। योगदर्शन में महर्षि पतंजलि लिखते हैं–

''सन्तोषादनुत्तमसुखलाभः।।''42

'सन्तोष से बहुत बडे सुख का लाभ होता है।'

शायद इस सुख के सम्बन्ध में किसी ने कहा है।–

सन्तोषामृततृप्तानां यत् सुखं शान्तचेतसाम्।
कुतस्तद्धनलुब्धानामितश्चेतश्च धावताम्।।

'सन्तोष का अमृत जिसने पी लिया, उसे पीकर जो तृप्त हो गया, उसे जो सुख मिलता है, जो शान्ति मिलती है, वह उन लोगों के लिए कहाँ है जो धन के लोभी हैं या दूसरी वस्तुओं के लालच में इधर–से–उधर और उधर–से–इधर दौड़ते फिरते हैं?

और यह सन्तोष का अमृत मिलता है अपने–आप पर काबू पाने से एक सीमा तक बाँध लेने से, निर्णय कर लेने से कि इस हद (सीमा) से आगे नहीं जाएँगे, नहीं तो सन्तोष कभी मिलता नहीं, 'तृप्ति' कभी होता नहीं। महात्मा विदुर ने महाभारत में कहा है–

नाग्निस्तृप्यति काष्ठानां नापगानां महोदधिः।
नान्तकसर्वभूतानां न पुंसां वामलोचना।।

'आग में लकड़ी डालते जाइए, उसकी भूख कभी मिटेगी नहीं; समुद्र में हजारों नदियाँ पहुँच जाएँ, तो भी उसकी प्यास बुझती नहीं; मौत सभी प्राणियों को खा ले, तो भी उसकी प्यास बुझती नहीं; मौत सभी प्राणियों को खा ले, तो भी उसका पेट नहीं भरता; स्त्री को पुरुषों से या पुरुष को स्त्रियों से 'तृप्ति' कभी होती नहीं।' तृप्ति का एकमात्र साधन सन्तोष है, अपने लिए हद (सीमा) बाँध लेना है, यह निर्णय कर लेना है कि इस हद (सीमा) से आगे जाएँगे नहीं।

इसलिए पैथागोरस ने कहा कि स्त्री–पुरुष को जिन्दगी (जीवन) में केवल एक बार मिलना चाहिए। जब पूछनेवाले ने कहा कि –''इससे सन्तोष न हो, तो?''

तो पैथागोरस ने उत्तर दिया–''वर्ष में एक बार मिलना चाहिए।''

पूछनेवाले ने कहा–''फिर भी तसल्ली (सन्तोष) न हो, तो?''

पैथागोरस बोले–''फिर मास में एक बार मिलना चाहिए।''

पूछनेवाले ने कहा–''यदि इससे भी तसल्ली न हो, तब?''

पैथागोरस बोले–''तब उस आदमी को बाजार से अपने लिए कफन खरीद लेना चाहिए, क्योंकि वह बहुत शीघ्र ही मर जाएगा।

मैं कहता हूँ कि एक नहीं, दो कफन खरीद लेने चाहिए, क्योंकि ऐसा करने वाले पति और पत्नी दोनों ही बहुत जल्दी मरेंगे।

कोई नियम ही नहीं रहा, अपने–आप पर कोई काबू ही नहीं। और हमारी यह सरकार भी पागल हो गई है। चाहिए यह था कि लोगों को ब्रह्मचर्य के लाभ बताए जाते, यह बताया जाता कि ब्रह्मचर्य से मनुष्य का शरीर स्वस्थ रहता है, बीमारियाँ (रोग) उसके पास आती नहीं, आएँ तो जल्दी चली जाती हैं। ब्रह्मचर्य से हड्डियाँ मजबूत (पक्की) होती है। आँख, नाक और कान की शक्ति बढ़ती है, मस्तिष्क में प्रकाश आता है, स्मरणशक्ति बढ़ती है, चित्त में प्रसन्नता रहती है। इसलिए ब्रह्मचारी रहो, सन्तान भी कम पैदा करो, अपने सुख की दुनिया भी बसा लो। इसकी बजाय शुरू कर दिया गया यह फैमिली प्लानिंग। कभी एक प्रकार की गोलियाँ, कभी दूसरी प्रकार की गोलियाँ। मैं हिमाचल प्रदेश में गया था, एक व्यक्ति से मिलना था। वह फैमिली प्लानिंग के कार्यालय में कर्मचारी है। वहाँ कार्यालय में काम करने वाले डॉक्टर साहब भी मिले। मैंने पूछा–''क्यों जो! आप जो फैमिली–प्लानिंग की गोलियाँ लोगों को देते हैं, उन्हें लेनेवाले अधिकतर लोग कौन हैं?'' उन्होंने बताया–''अधिकतर वे लोग हैं नौजवान कँवारे लड़के और नौजवान कँवारी लड़कियाँ।

इनका हो रहा है फैमिली प्लानिंग! यह विनाश का रास्ता नहीं तो क्या है? पागलपन नहीं तो क्या है? जितना रुपया इस फैमिली–प्लानिंग पर खर्च किया जाता है, उतना रुपया यदि ब्रह्मचर्य के प्रचार पर व्यय किया जाता तो इस देश के लोग गुलाब के फूल की भाँति खिल उठते; लोगों के चेहरों पर तेज चमक उठता।

यह अनमोल रत्न है भाई! गोलियाँ या टिकियाँ खाकर इसे नष्ट करो या किसी दूसरे तरीके से, इसके नष्ट होने में हानि–ही हानि है, लाभ है नहीं।

स्वामी सर्वदानन्द जी महाराज लाहौर आते ,भाषण देते तो अपने लगभग हर भाषण में एक कहानी सुनाया करते थे–

एक था माली। बहुत यत्न और परिश्रम से उसने गुलाब के फूलों का एक बाग लगाया। बहुत–से फूल हुए वहाँ । एक दिन उसने कोई पाँच–छः मन फूल तोड़े। उन्हें एक बहुत बड़े पतीले में रख दिया। कुछ पानी डाला, फूलों को मसल दिया। तब पतीले के नीचे आग जला दी। फूल गले। भाप बनी तो उसने पतीले के ऊपर अर्क निकालने का बर्तन रख दिया। कोई सोलह बोतल गुलाब का अर्क निकल आया। उसने उस अर्क को फिर आठ बोतल अर्क फिर से भट्ठी पर रखकर अर्क निकाला, अब के चार बोतल अर्क निकला। इस चार बोतल अर्क से उसने एक बार फिर अर्क निकाला, अब के अर्क दो बोतल रह गया। फिर भट्ठी पर चढ़ाया तो आधी बोतल गुलाब का इत्र निकल आया।

तब उस माली ने क्या किया?

बोतल को उठाकर वह एक गंदी नाली के पास पहुँचा। वहाँ सारा इत्र गन्दी नाली में फैंक दिया, बोतल को तोड़ दिया और घर चला आया।

शेष अगले अंक में....

thearyasamaj.org

श्रद्धा, अभ्यास एवं वैराग्य द्वारा सुक्रतु बनें

● महात्मा चैतन्यमुनि

क्रतु का अर्थ है कर्म करने वाला अर्थात् व्यक्ति को सदा कर्मशील बने रहना चाहिए। वेद हमें यही प्रेरणा देता है–**ओ३म् कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छतं समाः। एवं त्वयि नान्यथेतोऽस्ति न कर्म लिप्यते नरे।।** (यजु0 40–2) हे मनुष्य! (इह) इस लोक में (**कर्माणि कुर्वन् एव**) कर्मों को करते हुए ही तूने जीना है, (**शतं समाः जिजीविषेत्**) तू सौ वर्ष जीने की कामना कर, (**एवं त्वयि इतः अन्यथा नअस्ति**) कर्म करते हुए सौ वर्ष जीना ही तेरे जीवन का एकमात्र नियम है और कोई अन्य नियम नहीं मगर (न कर्म निप्यते नरे) इन कर्मों में उलझ नहीं जाना बल्कि विरत होकर सदा कर्मशील बने रहना। जीव कर्म करने में तो स्वतंत्र है मगर फल भोगने में वह परतंत्र है क्योंकि कर्मों का फल तो न्यायकारी परमात्मा ने देना है। इसलिए इस कर्म स्वतंत्रता का लाभ उठाकर सदा कर्मशील बने रहना चाहिए और ये कर्म निष्कामभाव से करने चाहिए। यजुर्वेद में ही अन्यत्र जीव को क्रतु कहा है–ओ३म् क्रतो स्मर (यजु०40–15)। श्रीकृष्ण जी भी कहते हैं–**अहं क्रतुरहं यज्ञः** (गीता 9–16)। गीता में अन्यत्र यह भी कहा गया है कि बिना कर्म के तो व्यक्ति एक क्षण के लिए भी नहीं रह सकता। अतः कर्म तो करने ही हैं मगर यदि व्यक्ति के द्वारा पुण्यकर्म किए जाएँ तो इससे वह निष्काम–कर्मी और सुक्रतु बन जाता है। वेद में सुक्रतु बनने की प्रेरणा दी गई है और साथ ही प्रक्रिया बताई गई है–

ओ३म् त्रीणि त्रितस्य धारया पृष्ठेष्वैरयद्रयिम्। मितीते अस्य योजना वि सुक्रतुः।। (सा०1015)मंत्र के सुक्रतु बनने के लिए मुख्यतः पहली बात कही गई कि–त्रीणी त्रितस्य धारया, जो व्यक्ति जीवन में तीन बातों को धारण कर लेता है, वह सुक्रतु बन जाता है। ऐसी बहुत सी तीन बातें हैं मगर यहाँ हम अभ्यास, वैराग्य और श्रद्धा की बात करेंगे जो आध्यात्मिक जीवन का आधार है। इनके कार्यान्वयन से जीवन में उत्कृष्टता प्राप्त करके मनुष्य पूर्णता को प्राप्त होता है तथा इसका साक्षात् पराविद्या से होता है। परा और अपरा–विद्या के संबंध में वेद में एक बहुत ही सुन्दर मंत्र आया है–**ओ३म् अवः परेण पर एनावरेण पदा वत्सं बिभ्रती गौरूदस्थात्। सा कद्रीची कं स्विदर्धं परागात्क्वे स्वित्सूते नहि यूथे अन्तः।।** (ऋ० 1–164–17) यहाँ पर (**गौ**) वेदवाणी को कहा गया है (**वत्सम्**) जो अपना उच्चारण करने वालों को (**बिभ्रती**) धारण करती हुई (उदस्थात्) उन्नत स्थान पर स्थित करती है। (**अवः**) इस निचले क्षेत्र में (**परेण**) पर के द्वारा और (**परः**) पर क्षेत्र में (**एनाअवरेण**) इस अवर के द्वारा हमारा धारण करती है–'**अवर**' है अपराविद्या–सांसारिक पदार्थों को प्राप्त कराती है मगर इनके भोग में डूबकर व्यक्ति असुर–सा बन जाता है और 'पर' पराविद्या है अध्यात्म–विद्या। (**सा**) वेदवाणी (**कद्रीची**) पृथिवी पर गति करती हुई (**कं स्वित्**) कितने महान् (**अर्धम्**) ऋद्ध अर्थात् सर्वोच्च स्थान को (**परागात्**) प्राप्त होती है। इसका अध्ययन करने वाला प्रकृति–विज्ञान में तो निष्णात् होता ही है मगर उससे वह ब्रह्मद्रष्टा होकर सुदीर्घ–काल के लिए मुक्त हो जाता है। (**क्व स्वित् सूते**) उसे फिर यह जन्म कहाँ देती है? यदि वह मुक्त न भी हो तो भी (**यूथे अस्मिन् नहि**) उसे सामान्य जन–समूह में जन्म नहीं देगी, वह तो '**शुचीनां श्रीमताम्**' या '**योगिनामेव**'–शुचि, श्रीमान् और योगियों के घरों में जन्म लेने वाला होता है।

1. **श्रद्धा**–श्रीकृष्णजी श्रद्धा का महत्त्व कहते हैं–**योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना। श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः।।** (गी० 6–47) सब योगियों में भी मैं उसे सर्वश्रेष्ठ मानता हूँ जो परमात्मा में अपने अन्तरात्मा को डालकर श्रद्धापूर्वक भजा है। इससे पूर्व तीसरे अध्याय में भी कहा गया है–'**श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यंते तेऽपि कर्मभिः** (3–31)–श्रद्धा से युक्त लोग कर्मों के बंधन से मुक्त हो जाते हैं। ऋग्वेद के 10वें अध्याय के 51वें सूक्त में अनेक–विध श्रद्धा की स्तुति की गई है क्योंकि श्रद्धा से ही साधक अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है। श्रद्धा के महत्त्व के संबंध में वेद में अन्यत्र आया है–**ओ३म् दृष्ट्वा रूपे व्याकरोत् सत्यानृते प्रजापतिः। अश्रद्धा मनृतेऽदधाच्छ्रद्धां सत्ये प्रजापतिः।।** (यजु० 19–77) (**प्रजापतिः**) प्रजापति परमात्मा ने (**रूपे दृष्ट्वा**) सत्य व असत्य दोनों के रूपों को देखकर (**सत्यानृते**) सत्य और असत्य को अलग–अलग छाँट दिया। (**अनृते**) झूठ में (**अद्धाम्**) अश्रद्धा को (**अदधात्**) रखा और (**सत्ये**) सत्य में (**श्रद्धाम् अदधात्**) श्रद्धा को रखा। वेद में एक प्रश्न किया गया है–**पृच्छन्ति स्म कुह सः इति?** आसुरी वृत्ति वाले लोग पूछा करते हैं कि वह कहाँ है? इसका उत्तर दिया गया–**जनासः अस्मै श्रत् धत्त।** (ऋ० 2–12–5) उसे श्रद्धा की आँखों से देखा जा सकता है मगर ज्ञानेन्द्रियों व अन्तःकरण के दोष से अविद्या उत्पन्न होती है और यह श्रद्धा ही अंधश्रद्धा बन जाती है। व्यक्ति के मन में दो प्रकार के भाव उठते हैं, एक को श्रद्धा कहते हैं, दूसरे को अश्रद्धा। '**श्रत्**' का अर्थ है सत्य, '**धा**' का अर्थ है धारण करना मगर अपने किसी न किसी दोष के कारण व्यक्ति श्रद्धा से दूर होकर अंधश्रद्धा में फँस जाता है।

ऐसे भ्रमित व्यक्तियों का मार्गदर्शन करते हुए गीता में (गी. 17–2 से 4) तीन प्रकार की श्रद्धा बताई है–सात्विक स्वभाव वालों की सात्विकी श्रद्धा, राजसिक स्वभाव वालों की राजसिकी श्रद्धा और तामसिक स्वभाव वालों की तामसिक श्रद्धा। आगे इनका विवेचन करते हैं कि सात्विक स्वभाव वालों की श्रद्धा देवपूजा अर्थात् आदर–सत्कारादि तथा परमात्मा की उपासना में होती है, राजसिक स्वभाव वालों की श्रद्धा भूत–प्रेतों की पूजा में होती है अर्थात् मांस–मदिरादि पीने वाले, दुराचारी, बलात्कारी, अत्यधिक मलिन संस्कारों वाले, अपने स्वार्थों के कारण जिनका जीवन भूतकाल के समान बन गया है, कोई अस्तित्व नहीं, प्रतिष्ठा नहीं, प्रेत–प्र+इतः जो जीते–जी भी मरे हुए के समान है, वह प्रेत है। इस प्रकार के लोगों के बारे में वे आगे कहते (गी. 17–5, 6) हैं आसुरि–बुद्धि वालों की अंधश्रद्धा होती है जो शरीर को कष्ट देने से भगवान् की उपलब्धि की आशा रखना, दंभ और अंहकार से युक्त होकर काम और आसक्ति के बल पर (शास्त्र–विहीन) उग्र तपों को करते हैं...ऐसे लोग अपने शरीर में विद्यमान पंचमहाभूतों के समूह को व्यर्थ में कष्ट देते हैं और शरीर में निवास करने वाले परमात्मा को भी नष्ट (अवहेलना) करते हैं...आर्ष ग्रंथों को ऋषि–मुनियों ने प्रमाणित ग्रंथ माना मगर समय–समय अपनी–अपनी कामनाओं के वशीभूत होकर लोगों ने अनेक प्रकार के अनार्थ ग्रंथों की रचना कर डाली और लोग सत्य से बहुत परे चले गए। यहाँ तक कि सत्य का दामन छोड़कर श्रद्धा का सफर अंध–श्रद्धा तक पहुँच गया। अब या तो व्यक्ति पुनः आर्ष ग्रंथों को प्रमाण मानें या फिर श्रीकृष्ण जी ने गीता में एक और कसौटी दी है। उन्होंने तामसिक, राजसिक व सात्विक ये तीन प्रकार की श्रद्धाएँ बताईं और यह निष्कर्ष भी निकाला कि तामसिक श्रद्धा अज्ञानयुक्त है जो किसी शाश्वत सत्य निष्कर्ष तक नहीं पहुँच सकती। राजसिक श्रद्धा स्वेच्छाचारी है वह भी सत्य तक नहीं पहुँचा सकती। केवल सात्विक श्रद्धा वाला व्यक्ति ही पमरमात्मा की उपासना करके अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकता है।

2. **अभ्यास**–गीता में जब अर्जुन श्रीकृष्णजी के समक्ष अपनी समस्या बताता है कि इस चंचल मन को वश में करना बड़ा कठिन है तो वे अर्जुन से कहते हैं–**अंसशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम्। अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।** (गी. 6–35 यहाँ पर अभ्यास और वैराग्य के द्वारा मन को वश में करने की बात कही गई है। ब्रम्हर्षि पतंजलि महाराज भी चित्त–वृत्तियों के निरोध की यही तंकनीक बताते हैं–अभ्यासवैराग्याभ्यां तन्निरोधः।। (यो.द. 1–12) अर्थात् अभ्यास और वैराग्य चित्तवृत्तियों का निरोध करने के उपाय हैं। अभ्यास के संबंध में आगे कहा–तत्र स्थितौ यत्नोऽभ्यासः।। (यो.द. 1–13)–उन अभ्यास और वैराग्य में से (स्थितौ) चित्त की स्थिरता के निमित्त जो प्रयत्न–चित्त परिकर्मों का उत्साह से अनुष्ठान करना है वह अभ्यास है। स्थिति और यत्न शब्द विचारणीय हैं–जब सतोगुण की प्रधानता बनती है तो वह सतोगुण प्रधान चित्त नदी प्रवाह की भाँति चंचलता–रहित प्रशांत बना रहता है, उस स्थिति के लिए–चित्त की ऐसी ही दशा बनाने के लिए जो प्रयत्न अर्थात् प्रयास–पराक्रम अथवा उत्साह करना है, वही यत्न है। इसलिए सतोगुण में जो चित्त की एकाग्रता बनती है उस स्थिति को बनाए रखने के लिए निरंतर व उत्साह से इसके साधनों (योगाङ्गअनुष्ठान) में लगे रहना, शिथिलता न आने देना ही अभ्यास है। सांख्यदर्शन में भी कहा गया है कि वैराग्य और अभ्यास से समाधि–लाभ होता है–**वैराग्यादभ्यासाच्च।।** (सां.द. 3–36)।

3. **वैराग्य**–गीताकार ने मन को वश में करने के लिए दूसरा उपाय बताया है–वैराग्य। यही बात महर्षि पतंजलि जी भी कहते हैं। उन्होंने वैराग्य के लक्षण इस प्रकार बताए हैं–दृष्टवानुश्रविकविषयवितृष्णस्य वशीकारसंज्ञा वैराग्यम्।। (यो.द. 1–15) अर्थात् दृष्ट–नेत्रादि इन्द्रियों से साक्षात् किए हुए विषयों से और वेदादि शास्त्रों में पढ़े या शास्त्रज्ञ–आचार्यों से सुने गए (पारलौकिक अथवा अतीन्द्रिय) विषयों से वासना–रहित मनुष्य की वशीकारसंज्ञा=स्वाधीनत्वानुभूति (विषयों में आसक्त न होना) वैराग्य है। यहाँ पर दो प्रकार के रागोत्पादक विषयों की चर्चा की गई है। एक तो दृष्ट और दूसरे आनुश्रविक। इनमें से दृष्ट हैं–जो लोक में भोगे जाते हैं। जैसे स्त्रियों के प्रति राग भोग्य पदार्थों के प्रति लालसा और धन एवं पद आदि पाने की इच्छा आदि और आनुश्रविक हैं–जिनके संबंध में शास्त्रों में पढ़ा है या शास्त्रज्ञों से सुन रखा है। जैसे–अगले जन्म में उत्तम माता–पिता या धनी परिवार

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

thearyasamaj.org

उत्कृष्ट शङ्का समाधान

● स्वामी विवेकानन्द परिव्राजक

शंका–क्या मुक्ति के लिए मनुष्य योनि ही अनिवार्य है? अन्य योनियों में मुक्ति नहीं हो सकती?

समाधान – मुक्ति केवल मनुष्य योनि में ही होती है और किसी प्राणी के शरीर से मुक्ति नहीं होने वाली है। गाय के शरीर से डायरेक्ट मुक्ति नहीं होगी। मनुष्य शरीर में भी केवल संन्यासी को मोक्ष होता है, और किसी का नहीं होता है।

शंका–क्या कीट–पतंग, सर्प, जीव–जंतु आदि मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं, यदि हाँ तो कैसे?

समाधान – नहीं, क्योंकि:–

● कीड़े–मकोड़े, पशु–पक्षी, जीव –जंतु कोई भी हों, वे योगाभ्यास, यम नियम का पालन नहीं करते। वे इस योनि से सीधे मोक्ष में नहीं जा सकते। मोक्ष के लिए सबका एक सस्ता रास्ता है। सबको उसी रास्ते से चलना पड़ता है। ईश्वर का न्याय सबके लिए एक समान है। वहाँ कोई अन्याय नहीं, कोई पक्षपात नहीं।

● ये कीड़े–मकोड़े, पशु–पक्षी अपने कर्मों का दण्ड भोगकर लौटकर वापस मनुष्य बनेंगे। पशु–पक्षी अपना दंड भोगकर के जब मनुष्य योनि में आएँगे, तो किसके घर में जन्म लेंगे?

ये कीड़े–मकोड़े जब मनुष्य बनेंगे तो पहले शूद्र परिवार में (शूद्र माता–पिता के घर में) जन्म लेंगे। शूद्र परिवार में, जिसको फोर्थ क्लास बोलते हैं, उन मजदूर, चपरासी आदि के घर में जन्म लेंगे। फिर वहाँ अच्छे कर्म करेंगे, तो प्रमोशन हो जाएगा।

● शूद्र व्यक्ति जब पुण्य–कर्म जमा करेंगे, तो फोर्थ क्लास से थर्ड क्लास–वैश्य परिवार में आ जाएँगे। फिर आगे और अच्छे कर्म करेंगे तो सेकण्ड क्लास–क्षत्रिय परिवार में प्रमोशन हो जाएगा। उसके बाद और अच्छे काम करेंगे, तो फर्स्ट क्लास–ब्राह्मण परिवार में जन्म होगा। ब्राह्मण में भी और ऊँचे ब्राह्मण के यहाँ जन्म ले लेंगे, जब और अच्छे काम करेंगे। उसको फर्स्ट क्लास सुपर बोलते हैं। और अच्छे काम करेंगे, तो फिर संन्यासी बन जाएँगे। और और संन्यासी बनकर के समाधि लागाएँगे। तब मोक्ष मिलेगा। सबके सब लोगों को इसी एक रास्ते पर चलना है।

● लोग अच्छे कर्म करेंगे, तो अच्छे घर में जन्म मिलेगा। वहाँ से और अच्छे संस्कार मिलेंगे। फिर और अच्छे कर्म करेंगे। एक बच्चे ने न्यायाधीश के घर में जन्म लिया और एक बच्चे को धोबी के घर में जन्म मिला। क्या यह दोनों का कर्म फल नहीं है? है न। तो उनके कर्मों में कुछ ऊँचा–नीचापन तो होगा ही। उसको ऊँचे परिवार में जन्म क्यों मिला? उसने पूर्व जन्म में अच्छे काम किए होंगे। अब इस न्यायाधीश के घर में जन्म लेकर उसे बचपन से ही अच्छे बुद्धिमान माता–पिता मिल गए। वे उसको अच्छे संस्कार देंगे। अच्छी बात सिखाएँगे और वो खूब तेजी से आगे बढ़ेगा। और जिसको धोबी के घर में जन्म मिला, उसने अच्छे कर्म नहीं किए। इसलिए अच्छे परिवार में जन्म नहीं मिला। यह है पूर्व जन्म में किए कर्मों का फल।

● जिसने जितना कर्म किया, उतना उसको फल मिला। आगे उसको नया चान्स है। फिर आगे पुरुषार्थ करें। इस प्रकार से पशु–पक्षी, कीट–पतंग भी मनुष्य बनकर मोक्ष प्राप्त कर सकते हैं।

शंका –मोक्ष से लासैटने के बाद पहला जन्म शूद्र परिवार में क्यों मिलेगा?

समाधान – मोक्ष से लौटने के बाद पहला जन्म शूद्र परिवार में मिलेगा। क्योंकि,

● महर्षि दयानंद जी ने ऋग्वेद (पहला मंडल, चौबीसवाँ सूक्त, मंत्र संख्या दो) के भाष्य में लिखा है कि –जो आत्माएँ मुक्ति से लौटती हैं, उनके पुण्य और पाप तुल्य (बराबर) होते हैं। पहले के लौकिक –सुख प्राप्ति के लिए किए गए सकाम कर्म–जनित पाप–पुण्य उनके जमा रहते हैं। और अपने कर्मानुसार पुण्य–पाप तुल्य होने से शूद्र माता–पिता के यहाँ जन्म लेकर वो शरीर धारण करते हैं।

जब पाप–पुण्य तुल्य होते हैं, तब साधारण मनुष्य का जन्म होता है। यह वेद की बात है, हमारे घर की बात नहीं है।

● कोई भी यात्रा शून्य (जीरो) किलोमीटर से आगे (स्टार्ट) होती है। शूद्र परिवार जीरो किलोमीटर है। जीरो मध्य में होता है। बाईं तरफ माइनस (–) और दाईं तरफ प्लस (+) होता है। शूद्र से बाईं तरफ पशु–पक्षी, पेड़–पौधे यानी माइनस (–) हैं। और दाईं तरफ ब्राह्मण परिवार प्लस (+) हैं। इसलिए मोक्ष से लौटकर पहला जन्म जीरो शूद्र परिवार में मिलेगा।

आप घर से चले मुंबई, तो कहाँ से किलोमीटर गिनना शुरू करेंगे? अपने घर से, वो है जीरो। फिर एक किलोमीटर चले, तो एक किलोमीटर यात्रा पूरी हो गई। तो शुरुआत कहाँ से होती है? जीरो से। इसी प्रकार से मुक्ति से जब लौट के आए, तो नई यात्रा चली। मुक्ति के लिए भी यात्रा जीरो से शुरु होगी। जीरो मतलब शूद्र परिवार, सामान्य जन्म, साधारण मनुष्य। यहाँ से यात्रा शुरु होती है। इसलिए मुक्ति से लौटकर आने वाले आत्मा को भगवान शूद्र के घर में जन्म देता है।

● अब मेहनत करो। कोई एक जन्म में दस मील पार करेगा, कोई बीस मील पार करेगा। पशु–पक्षी से लौटकर शूद्र बना। शूद्र के बाद वैश्य बना फिर क्षत्रिय बना। फिर संन्यासी बना। शूद्र के बाद वैश्य बना। फिर क्षत्रिय बना। फिर ब्राह्मण, फिर संन्यासी बना और फिर मोक्ष की प्राप्ति। जैसा कि पहले बताया था। दस–दस मील पार करते जाएँ। यह सामान्य नियम है कि–शूद्र, वैश्य, क्षत्रिय और ब्राह्मण, फिर संन्यासी और फिर मोक्ष।

● एक व्यक्ति ज्यादा जोर से दौड़ लगाएगा, तो वो सीधा चालीस मील पार कर जाएगा। लेकिन आगे जाकर ठंडा पड़ गया, दूसरे काम शुरु किए, तो बीस मील वापस भी आ जाएगा। यह अप–डाउन तो होता रहता है। सामान्य नियम है कि क्रमशः उत्तरोत्तर उन्नति होगी। और उसमें जो ऊँचे–नीचे स्तर बन रहे हैं, वो कर्म के आधार पर हैं, जन्म के आधार पर नहीं हैं।

● कर्म से व्यक्ति ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र माना जाता है। यदि अच्छे कर्म करेगा, तो अच्छे बुद्धिमान के यहाँ जन्म लेगा। यह कर्म–फल है, मुफ्त में नहीं मिलता। कर्म के आधार पर ही उसको अगला फल–जन्म मिला। और आगे उन्नति का अवसर जन्म से ही मिलेगा। वो पिछले कर्म का फल भोगेगा।

● और कोई अपवाद यूँ भी होता है कि पहले दो सौ, पाँच सौ, हजार जन्म भोग चुका। अच्छे कर्म भी किए, बुरे भी किए। सब तरह के कर्म कर बहुत सारे संस्कार जमा कर लिए। फिर एक जन्म में शूद्र के घर में पैदा हुआ। अब पिछली बहुत सारी सम्पत्ति (संस्कार) थी। उसके बाद फिर कोई घटना देख ली। जैसे महर्षि दयानंद जी ने देख ली। महात्मा बुद्ध ने देख ली। ऐसी और कई लोगों ने संसार की घटनाएँ देख लीं। उन घटनाओं को देखकर उनके मन में वैराग्य जाग गया। जो पिछले हजारों जन्मों की कमाई थी। वो जाग गई। अब इसी जन्म में उसने खूब पुरुषार्थ किया, तो शूद्र या क्षत्रिय परिवार में पैदा होकर के सीधा ब्राह्मण बन सकता है। यह अपवाद है। हमारे गुरुजी–स्वामी सत्यपति जी महाराज का जन्म तो ऐसे ही साधारण मुस्लिम परिवार में हुआ था। अब फिर घटनाएँ देखीं, तो वैराग्य हो गया। फिर खूब जोर लगाया। आज देखो कहाँ पहुँच गए।

जिस व्यक्ति ने 20 वर्ष की उम्र तक क, ख ग भी नहीं सीखा हो। आज वह वेदों का विद्वान और कितने ऊँचे स्तर का योगी, तपस्वी और कितना शास्त्रों का पंडित, और कितना काम करने वाला व्यक्ति, कितनी संस्कृत भाषा जानने व्राला बन गया। यह कोई साधारण बात है? हो सकता है, इसी जन्म में इनकी मुक्ति हो जाए। यह इनका अंतिम जन्म हो। और अगर मान लिया, कुछ कमी रह गई, तो एक जन्म लेना पड़ेगा, बस फिर गाड़ी मोक्ष के स्टेशन पर जाकर रुकेगी।

● अब जब इतने महान पुरुष देख रहे हैं, तो इनको देखकर हम प्रेरणा ले सकते हैं। मुक्ति वाला तो आएगा नहीं हमें प्रेरणा देने के लिए। उसके लिए तो भगवान ने मना कर दिया कि तुम मत करो संसार को प्रेरणा। तुम्हारे बस का नहीं है। यह हमारा ही काम है। हम कर लेंगे। तो ऐसे–ऐसे महान पुरुषों को देख करके हम बहुत सी प्रेरणा ले सकते हैं कि इतने साधारण परिवार में जन्म लेकर भी इतनी ऊँचाई तक पहुँच गए।

● तात्पर्य है कि व्यक्ति बहुत तीव्र गति से भी उन्नति कर सकता है। पर वो अपवाद है। ऐसे लोगों की संख्या बहुत कम होती है। सामान्य नियम तो वो ही है। स्टेप बाई स्टेप चलना अर्थात् पहले शूद्र, फिर वैश्य, क्षत्रिय, ब्राह्मण संन्यासी और फिर मोक्ष।

दर्शन योग महाविद्यालय
रोजड़ वन, गुजरात

thearyasamaj.org

मुक्ति का स्वरूप

● डॉ. ज्वलन्त कुमार शास्त्री

मुक्ति और बन्ध

1. सभी दुःखों से छूटकर बन्धन रहित सर्वव्यापक ब्रह्म और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना **मुक्ति** है।

अविद्या के निमित्त से दुःख फल को न चाहते हुए भी भोगना **बन्ध** है।

2. **बन्ध** से सभी जीव छूटना चाहते हैं। सभी जीव **मुक्ति** को पाना चाहते हैं।

3. सुख मात्र को प्राप्त होना और ब्रह्म में रहना **मुक्ति** है। सुख-दुःख मिश्रित फल को प्राप्त करना और भिन्न-भिन्न योनियों में रहना **बन्ध** है।

4. परमेश्वर की आज्ञा का पालन, स्तुति, प्रार्थना और उपासना, योगाभ्यास, विद्या का पढ़ना-पढ़ाना, धर्म से पुरूषार्थ, ज्ञान की उन्नति, पक्षपात रहित न्यायाचरण, सत्यभाषण और परोपकार करना, अधर्म, अविद्या, दुर्व्यसन, कुसंग तथा कुसंस्कार से अलग रहना **मुक्ति** के साधन हैं। इसके विपरीत ईश्वर की आज्ञा का भंग आदि कार्यों से **बन्ध** प्राप्त होता है।

1. जैन-बौद्धमतानुसार मुक्ति का स्वरूप

जैनमत के प्रामाणिक ग्रन्थ 'रत्नसार', भाग 1, पृष्ठ 23-24 तथा 'प्रकरण रत्नाकर' भाग-4 एवं 'संग्रहणी सूत्र' 268 में मुक्ति का स्वरूप वर्णन किया गया है। सत्यार्थप्रकाशकार ने जैनियों की मुक्ति का वर्णन नवम-समुल्लास तथा द्वादश-समुल्लास में क्रमशः संक्षेप तथा विस्तार से किया है।

महावीर तीर्थङ्कर ने गौतमजी से मुक्ति का स्वरूप निम्न प्रकार वर्णित किया-

ऊर्ध्वलोक में एक 'सिद्धशिला' स्थान है। स्वर्गपुरी के ऊपर पैंतालीस लाख योजन लम्बी और उतनी ही पोली है तथा 8 योजन मोटी है। वह सिद्ध शिला मोती के श्वेतहार या गोदुग्ध के सदृश या इससे भी स्वच्छ (उजली) है। वह शिद्धशिला चौदहवें लोक की शिखा पर है। उस सिद्ध शिला के ऊपर शिवपुर धाम है। उसमें मुक्त पुरूष जाकर रहता है, चुपचाप बैठा रहता है। वहाँ जन्म-मरणादि का कोई दोष नहीं है वहाँ सभी मुक्त पुरूष आनन्द प्राप्त करते हैं उन्हें कोई दुःख प्राप्त नहीं होता। सिद्धशिला में जाके पुनः जन्म-मरण के बन्धन में जीव नहीं आते तथा सभी कर्मों से छूट जाते हैं। **सकल वासनाओं की निवृत्ति से शून्य रूप निर्वाण बौद्धों की मुक्ति है।**

2. ईसाइयों के अनुसार मुक्ति का स्वरूप

चौथे आसमान पर मुक्ति का स्थान 750 साढ़े सात सौ कोश का है। उसकी लम्बाई-चौड़ाई एक समान है। उसकी दीवार की मोटाई 144 एक सौ चवालीस हाथ है। वह नगर निर्मल स्वर्ण से बना हुआ है। स्वच्छता काँच के समान है। उस नगर की दीवार की नींव में बहुमूल्य पत्थरे हैं और उन पत्थरों से वह सजी सँवरी है। उसकी दीवार की जड़ाई सूर्यकान्तमणि से की गई है। पहली नींव (दीवार की) सूर्यकान्त की, दूसरी नीलमणि, तीसरी लालड़ी की, सातवीं पीतमणि की, आठवीं पेरोज की, नवीं पुखराज दसवीं लहसनिये की, ग्यारहवीं धूम्रकान्त की तथा बारहवीं मटीम की बनी है।

12 बारह फाटक बारह मोती के हैं। अर्थात् एक-एक मोती से एक-एक फाटक बने हैं। नगर की सड़क स्वच्छ काँच के समान निर्मल सुवर्ण निर्मित है। (योहन प्रकाशित सुसमाचार, पर्व-21 आयत 16-21) स्वर्ग में ईश्वर और ईसा का सिंहासन होगा; जिसमें वे निरन्तर बैठे रहेंगे। वहाँ कोई शाप नहीं होगा। वहाँ रात नहीं होगी। वहाँ बिना दीपक या सूर्यादि के ज्योति होगी।

ऊर्ध्वलोक में एक 'सिद्धशिला' स्थान है। स्वर्गपुरी के ऊपर पैंतालीस लाख योजन लम्बी और उतनी ही पोली है तथा 8 योजन मोटी है। वह सिद्ध शिला मोती के श्वेतहार या गोदुग्ध के सदृश या इससे भी स्वच्छ (उजली) है। वह शिद्धशिला चौदहवें लोक की शिखा पर है। उस सिद्ध शिला के ऊपर शिवपुर धाम है। उसमें मुक्त पुरूष जाकर रहता है, चुपचाप बैठा रहता है। वहाँ जन्म-मरणादि का कोई दोष नहीं है वहाँ सभी मुक्त पुरूष आनन्द प्राप्त करते हैं उन्हें कोई दुःख प्राप्त नहीं होता। सिद्धशिला में जाके पुनः जन्म-मरण के बन्धन में जीव नहीं आते तथा सभी कर्मों से छूट जाते हैं। सकल वासनाओं की निवृत्ति से शून्य रूप निर्वाण बौद्धों की मुक्ति है।

पर्व 19 आयत 7 के अनुसार ईश्वर ने यीशु का विवाह स्वर्ग में किया। पर्व 12 आयत 7 के अनुसार स्वर्ग में युद्ध हुआ मीखायेल और उसके दूत अजगर से लड़े और अजगर उसके दूत से लड़ा इन्हीं ग्रन्थों के प्रमाणों के आधार पर स्वामी दयानन्दजी ने लिखा है-"ईसाई चौथा आसमान, जिसमें विवाह, लड़ाई, बाजे-गाजे वस्त्रादि धारण से आनन्द भोगना मानते हैं।" (नवम समुल्लास)

3. इस्लाम (कुरआन) के अनुसार मुक्ति

कुरआन में मुक्ति को जन्नत कहा है और यह सातवें आसमान पर है। वहाँ सदैव रहने वाला बाग है, जिसमें उन्हें प्रवेश मिलेगा। वहाँ उन्हें सोने के कंगनों और मोती से आभूषित किया जाएगा और उनका वस्त्र रेशमी होगा। वे ऊँचे भवनों में निश्चिन्त होकर रहेंगे। जन्नत में सुख-वैभव की सभी चीजें होंगी, जिनका वे आनन्द प्राप्त करेंगे। वे अपनी पत्नियों के साथ घने सायों में मसनदों पर तकिये लगाए बैठे होंगे। भोजन में मेवे मिलेंगे। आमने-सामने तख्तों पर बैठेंगे। निथरी बहती (शराब के स्त्रोत) से मद्यमात्र भर-भर कर उनके बीच फिराये जाएँगे। यह शराब बड़ी ही मजेदार और पीनेवाली चीज होगी। जिससे सिर में न दर्द होगा न नशा। नीचे निगाहोंवाली बहुत ही सुन्दर औरतें मिलेंगी। ऊँचे-ऊँचे कोठे और नीचे नहरें बहती हुई होंगी। सोने के बरतन तथा जो जी में आए, इच्छानुसार आँखों को अच्छी लगने वाली सभी चीजें मिलेंगी। रेशम के बारीक और मोटे कपड़े बड़ी-बड़ी आँखों वाली 'हूरें', अछूती अण्डे के समान छिपाई गई स्त्रियाँ, एक ही उम्र की नवयुवतियाँ, अंगूरों के बाग और छनकते हुए गिलास मिलेंगे। मौत से वहाँ सदा छुटकारा होगा। पानी की नहरें जिनमें कोई दुर्गन्ध नहीं, मजा न बदलनेवाली दूध की नहरें, शुद्ध शहद, हर तरह के मेवे, नाना प्रकार की नहरें और झरने, सभी मेवे दो-दो प्रकार के, अतलस के बिछौने, सुगन्धित फूल, झुके हुए मेवे के पेड़ तथा नेमत भरे बाग होंगे। चाँदी और शीशे के बरतन तथा फलों से लदी हुई टहनियाँ होंगी। वहाँ न होगी धूप की तेजी और न कड़ी सर्दी। (जन्नत का यह वर्णन कुरआन के सूरा- 34 से 39,43, 44, 47, 55, 56, 76, 77 तथा 78 सूरा संख्या के अनुसार किया गया है)।

इस जन्नत का सुख काफिरों (गैर मुसलमानों) को नहीं मिलेगा। जैनी तथा ईसाई भी यह मानते हैं कि उनका स्वर्गसुख जैनियों तथा ईसाइयों से इतर को न मिलेगा, किन्तु उनमें यह पक्षपात नहीं है कि "काफिरों को मारने वाले सभी जन्नत में जाएँगे (सूरा 9, आयत 88-93,903,999)। बहिश्त का सुख सर्वदा मिलेगा वहाँ से लौटना नहीं होगा। सबसे विचित्र बात सूरा 56 तथा सूरा-76 में लिखी है कि मोती के वर्ण सदृश वहाँ (जन्नत में) लड़के- गिल्में मिलेंगे। इस पर स्वामीजी की टिप्पणी है "क्या स्त्रीजन उनको (अर्थात् जन्नत में रहने वालों को) तृप्त नहीं कर सकतीं। क्या आश्चर्य है कि जो यह महा बुरा कर्म लड़कों के साथ दुष्टजन करते हैं, उसका मूल यही कुरान का वचन हो?" (सत्यार्थप्रकाश, चतुर्दश समुल्लास)

4. पौराणिकों के भिन्न-भिन्न मत-मतान्तरों के अनुसार मुक्ति का स्वरूप-

वाममार्गी श्रीपुर में जाकर लक्ष्मी जैसी स्त्रियों का मिलना, मद्य-मांसादि खाना-पीना, रङ्ग-राग, भोग करना मानते हैं। इसी प्रकार शैव कैलाश, वैष्णव वैकुण्ठ और गोकुलिए गोसाईं गोलोक आदि में जाकर उत्तम स्त्री, अन्न-पान, वस्त्र स्थान आदि को प्राप्त करते हैं तथा आनन्द भोगते हैं। एक बात सभी कहते हैं कि स्वर्ग या मुक्ति में रोग नहीं होंगे तथा युवावस्था सदा बनी रहेगी। इस पर स्वामी दयानन्द सरस्वती की युक्तियुक्त टिप्पणी है। "यह उनकी बात मिथ्या है। क्योंकि जहाँ भोग वहाँ वृद्धावस्था अवश्य होती है।" (सत्यार्थ प्रकाश, नवम समुल्लास)

इसके अतिरिक्त पौराणिकों में चार प्रकार की मुक्ति मानी जाती है। 1. **सालोक्य**-ईश्वर के लोक में निवास। 2. **सारूप्य**- उपासनीय देव की आकृति के समान बन जाना। 3. **सामीप्य**- ईश्वर के समीप सेवक के समान रहना। 4. **सायुज्य**- ईश्वर के साथ संयुक्त हो जाना।

स्वामी दयानन्द ने पाँचवीं 'सानुज्य मुक्ति' का वर्णन भी किया है जो सम्भवतः किसी पुराण मतानुयायी-सम्मत हो। छोटे भाई के सदृश ईश्वर के साथ रहना 'सानुज्य मुक्ति' है। 5. **अद्वैत वेदान्ती**- मुक्ति में जीव का ब्रह्म में लय होना (समुद्र में बिन्दुओं के मिलने के समान) ही मोक्ष का स्वरूप समझते हैं। ऐसी स्थिति में-"सुख और आनन्द का भोग जीव कैसे प्राप्त कर सकता है?" (सत्यार्थप्रकाश, नवम समुल्लास)

5. वेदानुसार (वेदोक्त तथा वेदसम्मत सत्यशास्त्रानुसार) मुक्ति का संक्षिप्त स्वरूप-

वस्तुतः मुक्ति एक ही है अनेक नहीं। जिस प्रकार ब्रह्म एक है और वह एक निश्चित स्वरूप तथा लक्षणवाला है, ब्रह्म-भिन्न मतानुसार अनेक परमेश्वर नहीं है और न उसके परस्पर विरूद्ध

शेष पृष्ठ 11 पर ☞

thearyasamaj.org

क्या चारों वेदों की रचना का समय एक ही है

● डॉ. सहदेव वर्मा

आर्य जगत के 15 जून के अंक में श्री हरिश्चन्द्र जी वैदिक का लेख प्रकाशित हुआ है। शीर्षक है 'वेद एवं वैदिक भाषा अपौरुषेय है या पौरुषेय?' इसमें श्री वैदिक जी ने कुछ स्थापनाएँ प्रस्तुत की हैं। उपर्युक्त लेख की सिद्धि में जो श्री आदित्य मुनि जी की सशक्त तार्किक और बौद्धिक स्थापनाएँ हैं उनके खण्डन में आपने द्रविड़ प्राणायाम के द्वारा उन्हें अमान्य सिद्ध करने का प्रयास करने में अशक्त अतार्किक तथा गले से न उतरने वाले थोथे उद्धरण उधृत किए हैं।

आगे हम श्री वैदिक जी के द्वारा प्रस्तुत उनकी मान्यताओं पर ही विचार करेंगे। उन्होंने पहले ही अनुच्छेद में पहले श्री आदित्य मुनि जी की स्थापना प्रस्तुत की है। जिसमें श्री वानप्रस्थी जी ने यह तर्क प्रस्तुत किया है कि ऋग्वेद यजुर्वेद तथा सामवेद के ये नामकरण क्यों हुए? उन्हें 'अग्नि' (प्रकाश स्वरूप होने से ज्ञान का वेद) 'वेद' (क्रिया स्वरूप होने से कर्म का वेद) और 'आदित्य' (आदिम ऋषियों द्वारा उपासनीय होने से उपासना का वेद) नाम से संकलित कर परमात्मा द्वारा उपदिष्ट माना जाने लगा। और उन्हें त्रयी के ग्रन्थ भी कहा जाने लगा। अथर्ववेद तो सबके बाद में अस्तित्व में आया, जिससे उसके नाम का उल्लेख मनुस्मृति तथा बाल्मीकि रामायण तक में नहीं मिलता है।

अब देखना यह है कि श्री वानप्रस्थी जी ने जिस अथर्ववेद की रचना को प्रथम तीन वेदों की रचना से इस आधार पर पर्याप्त परवर्ती माना है, क्यों कि उसका नाम मनुस्मृति तथा बाल्मीकि रामायण तक में नहीं मिलता। तर्क वितर्क यहीं से शुरू हो जाता है। श्री वैदिक जी ने श्री आदित्य मुनि जी की इस बात का खण्डन इस तर्क के द्वारा किया है कि यदि 'अथर्ववेद बाद में बना होता तो ऋग्वेद और यजुर्वेद में उसका (अथर्ववेद का नाम) क्यों आता? बात तो वजनदार लगती है। तर्क भी सशक्त मालूम पड़ता। परन्तु जब तक उदाहरण प्रस्तुत न किया जाय तर्क की सिद्धि कैसे हो। अतः श्री वैदिक जी ने ऋग्वेद का एक मंत्र उधृत किया है– देखियेः–

'सो अंगिरोभिरंगिरस्तमो अभूद् वृषभिः सखिभिः सखा सन्।
ऋग्मिभिःर्ऋग्मी गातुभिर्ज्येष्ठो मरुत्वात्री भवत्विद्र ऊति। '

(ऋक् 1-100-4)।

इस मंत्र का अर्थ करते हुए श्री वैदिक जी कहते हैं कि ऋग्वेद में 'अंगिरोभिः' पद अथर्ववादियों के लिए है। श्री वैदिक जी के अनुसार स्पष्ट है कि यदि अथर्ववेद ऋग्वेद के पीछे बना होता या उसका अनुकरण अथर्ववेद ने किया होता तो ऋग्वेद में अथर्ववेद का नाम न होता। अतः अथर्ववेद ऋग्वेद के साथ ही प्रदत्त ज्ञान है। यह अर्थ कुएँ के मेंढक की भाँति केवल अमिधार्थ का ही द्योतक है। मेंढक को बाहर का जगत दिखाई नहीं देता। कहने का तात्पर्य यह है कि श्री वैदिक जी यदि ऋषि दयानन्द द्वारा उद्धृत इस मंत्र के इसी पद का अर्थ देख लेते तो उन्हें अपनी राय वास्तविकता के निकट ले जाती। ऋषि दयानन्द ने इस मंत्र का अर्थ करते हुए लिखा है–

'जो अंगों के रस रूप हुए प्राणों के साथ अत्यन्त प्राण के समान वा सुख की वर्षा के कारणों से सुख सींचने वाला वा मित्रों के साथ वा ऋग्वेद के पढ़े हुओं के साथ ऋग्वेदी हुआ है, वह अपनी सृष्टि में प्रजा को उत्पन्न करने वाला वा अपनी सेना में प्रशंसित वीर पुरूष रखने वाला ईश्वर और सभापति हम लोगों की रक्षा आदि व्यवहार कि लिए हो ।' इस ऋषि कृत भाष्य में अथर्व वेद का तो कहीं नाम नहीं आया, फिर श्री वैदिक जी की बात मानी जाय या ऋषि दयानन्द की?

श्री वैदिक जी यहीं तक नहीं रुके। उन्होंने यजुर्वेद में भी अथर्ववेद ढूँढ लिया। एक उद्धरण उधृत करते हुए वे लिखते हैंः– 'यमाय यमसूमथर्वभ्यो अवतो काम।' यजु 030/15 अर्थात् अवतोकाम गर्भ से सन्तान बाहर निकल गई हो जिसकी, उस स्त्री या गौ आदि को, अथर्वभ्य अथर्व वेदी को दें।' यहाँ स्पष्ट रूप से यजुर्वेद में अथर्ववेद का नाम आया है, इसलिए श्री वैदिक जी के अनुसार अथर्ववेद यजुर्वेद का ही समकालीन है। वैदिक जी तो और आगे तक गए, उनके मतानुसार 'अथर्ववेद अन्य विद्याओं के साथ शलय चिकित्सा आदि चिकित्साओं का प्रधान केंद्र है। अतः यजुर्वेद में रोगी को अथर्ववेदी को देने को कहा है।'

यहाँ भी ऋषि दयानन्द ने 'यमाय,' 'यम सूम' और 'अवतोकाम' का जो भाष्य किया है उसे देख लीजिए, उसे भी पढ़ लीजिए और सन्दर्भ सहित जो अर्थ उद्धृत किया है उसे स्वीकार कीजिए, अपने अर्थ को अनर्गल प्रलाप ही मानिए। ऋषि का भाष्य–'हे जगदीश्वर वा राजन्! आप (यमाय) नियम कर्ता के लिए (यमसूम) नियन्ताओं को उत्पन्न करने वाली को (अथर्वभ्यः) अहिसंकों के लिए (अवतोकाम) जिसकी सन्तान बाहर निकल गई हो उस स्त्री को भी अथर्ववेदी को दें। यहाँ भी ऋषि दयानन्द ने अथर्वभ्यः का अर्थ 'अथर्ववेद' नहीं किया जैसा श्री वैदिक जी ने किया है, अपितु (अहिसंको के लिए) किया है। उस सन्तान को अहिंसको को ही क्यों दें? इसका भी ठोस कारण है।

श्री वैदिक जी ने वेदों से ही अथर्ववेद की सिद्धि नहीं की, वरन् मनुस्मृति में भी अथर्ववेद का जिन्न ऋषि दयानन्द की ओट लेकर बाहर निकाल दिया। मनुस्मृति के इस श्लोक को उद्धृत कर उन्होंने तीन वेदों को चार में परिवर्तित कर दिया है। देखिएः–

'अग्नि वायुरविभ्यस्तु त्रयं ब्रह्म सनातनम्।
दुदोह यज्ञसिद्धयर्थमृग्यजुः साम लक्षणम्।।

जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि (चारों महर्षियों) के द्वारा वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराए और उस ब्रह्मा ने अग्नि वायु और आदित्य (अंगिरा) से ऋग्, यजु, साम और (अथर्व) का ग्रहण किया।

अब यहाँ देखिए त्रय का अर्थ चार करके तथा तीन ऋषियों के नाम गिनाकर चौथे ऋषि की मनमाने ढंग से अनुवृत्ति लेकर 'अंगिरा' की रचना कर दीं। ठीक है–व्याकरण के नियमों में कहीं कहीं ऐसा होता है कि यदि अर्थ की सिद्धि न हो तो सब जगह पाद पूर्ति के लिए अनुवृत्ति ले लेनी चाहिए। अब विद्धानों को 'त्रय' का अर्थ 'चत्वार' लेना चाहिए। या फिर श्री वैदिक जी को नवीन 'वैदिक–स्मृति' की रचना करनी चाहिए जिसके द्वारा किसी भी संख्या को मन माने ढंग से परिवर्तित करके अपने अर्थ की सिद्धि हो सकें।

श्री वैदिक जी ने पूरी शक्ति से शास्त्रों का मन्थन करके अपने प्रयोजन की सिद्धि की है। वे वेदों तथा 'मनुस्मृति' तक ही नहीं रुके अपितु–ब्राह्मण ग्रन्थों से भी उन्होंने तीन से चार निकाल दिए। देखिएः– 'अग्निर्वा ऋग्वेदो, वायोर्यजुर्वेदः, सूर्यात् साम वेदः।' शतपथ ब्राह्मण 11/5/813। इसका अर्थ श्री वैदिक जी ने किया हैः– 'प्रथम सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य तथा (अंगिरा) इन ऋषियों की आत्मा में एक–एक वेद का प्रकाश किया है। यहाँ भी वही हाल बेढंगा जो पहले था।' अग्नि से ऋग्वेद ठीक। वायु से यजुर्वेद ठीक। आदित्य से साम वेद भी ठीक–परन्तु यह अंगिरा कहाँ से प्रकट हो गए। शतपथ में (तीन) ऋग्यजुःसाम (तीन)। तथा इनका अर्थ करते करते चौथे आगए अंगिरा। यह अनुवृत्ति कहाँ से ली गई? श्री वैदिक जी ही बताएँगे। क्या इस तथ्य से यह ध्वनि नहीं निकलती कि अथर्ववेद बाद की रचना है? पहले वेद, फिर मनुस्मृति तत्पश्चात् शतपथ, इन सब में से तीन से चार निकाल कर श्री वैदिक जी को संतोष नहीं हुआ, तो वे फिर वेदों की ओर लपके। अपने लिखा कि चारों वेदों का वर्णन त्रयी विद्या के नाम से भी किया जाता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि वेद तीन हैं। यह वर्णन चारों वेदों से सम्बन्धित है। वेदों को त्रयी विद्या नाम से तो श्री वैदिक अभिहित करते हैं, परन्तु इसका अर्थ चारों से संबंधित बताकर 'वेद चार' हैं। यह सिद्ध करना चाहते हैं। जहाँ तक हमारी जानकारी है, वेदों में त्रयी विद्या शब्द का प्रयोग नहीं हुआ, यदि हुआ तो श्री वैदिक जी–बताएँ। इस त्रयी विद्या को सिद्ध करने के लिए श्री वैदिक जी ने फिर ब्राह्मण ग्रंथों का सहारा लिया है। श्री वैदिक जी लिखते हैं ब्राह्मण ग्रंथों में त्रयी विद्या का वर्णन आया है। जिस शतपथ ब्राह्मण में चारों वेदों का नामों सहित उल्लेख मिलता है। (हम पहले ही उस स्थल का उल्लेख कर चुके हैं जहाँ शतपथ ब्राह्मण में अग्निर्वा ऋग्वेदों वायोयजुर्वेदः सूर्यात् सामवेदः।' तीन वेदों का ही उल्लेख है– परन्तु श्री वैदिक जी ने अपने विशेषाधिकार से अंगिरा ऋषि के द्वारा अथर्ववेद का भी प्रकाश करा दिया।

आदरणीय श्री वैदिक जी ने रबड़ व्यायाम द्वारा अर्थ को गुलेल की तरह खींच मारा है। देखिएः– चारों वेदों का वर्णन त्रयी विद्या से किया जाता है। लेकिन दूसरा यह अर्थ नहीं कि वेद तीन हैं।

यह वर्णन चारों वेदों से सम्बधित है। ब्राह्मण ग्रन्थों में भी त्रयी विद्या का वर्णन आया है। जिस शतपथ ब्राह्मण में लिखा है कि 'त्रयी वै विद्या ऋचोयजूंषि सामानि इति।' अर्थात् विद्या भेद से वेद तीन कहाते हैं। (8/6/7) आश्चर्य है कि स्पष्ट तथा तीन को भी श्री वैदिक जी' किन्तु परन्तु करके तीन को भी चार बना ही देते हैं। इन सब प्रमाणों से सिद्ध है कि अथर्व वेद की रचना बाद में हुई।

यहाँ हम वेदों की रचना को पौरूषेय या अपौरूषेय के गोरख धन्धे में रखकर लेख की गम्भीरता को झमेले में डालना नहीं चाहते। यह ज्ञानी और स्वाध्यायशील विद्वानों का कार्य है, परन्तु यदि वेदों की रचना का काल आगे पीछे मान लिया जाय तो संशोधन और संशोधक की स्थिति तो माननी ही पड़ेगी। इसी प्रकार वैदिक भाषा के सम्बन्ध में भी हम कलम नहीं चला रहे हैं। क्योंकि 'भाषा–विज्ञान' और भाषा वैज्ञानिकों के अनुसार भाषा बनती बिगड़ती रहती है। अर्थात् भाषा का उत्थान पतन होता रहता है। 'संस्कृत' शब्द इस तथ्य का साक्षी है।

विमान–निर्माण और तीव्र गति से उड़ान के व्यूह से भी हमने अपने आपको अलग रखा है। यह वैज्ञानिकों का काम है। या फिर उन विचारकों का जो उनकी गहराइयों को समझते हैं। आशा है सुधी पाठकों के साथ श्री वैदिक जी भी और गहराई से इस विषय में अग्रसर होंगे। तथा तीन का चार न करके तीन ही रहने देंगे।

24/4 बिशन सरूप
कॉलोनी–पानीपत–132103
दूरभाष :–0180/2643700

thearyasamaj.org

समीक्षा एवं विचार -मन्थन कर वेद प्रचार योजना को नया रूप देने का शुभावसर

● मनमोहन कुमार आर्य, देहरादून

आर्य समाज ग्रेटर ह्यूस्टन, 14375, स्हिलर रोड, ह्यूस्टन TX 77082 का स्थापना दिवस दिनांक 16 व 17 अगस्त 2014 को मनाया जा रहा है। यह प्रसन्नता का विषय है कि महर्षि दयानन्द का नाम व काम अमेरिका की धरती पर स्थान पा गया है। **वेदिक धर्म सारे संसार को एक कुटुम्ब मानता है। यह उच्च भावना वैदिक धर्मियों व इनके वैदिक साहित्य की ही देन है। अभी यह बात पूरी तरह से संसार के सम्मुख नहीं पहुँची है और न ही संसार के विद्वानों ने इस पर विचार किया है।** यदि वह इन दो शब्दों **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** पर ही विचार कर लें तो हम समझते हैं कि वह वैदिक धर्म के महान आशय को समझ सकने में सफल हो सकते हैं। जो मत या धर्म सारे संसार को एक परिवार के रूप में घोषित करता है वह धर्म, मत, विचारधारा व उसके सिद्धान्त अति उच्च व सर्वश्रेष्ठ कहे जा सकते हैं। महर्षि दयानन्द अपने पितृ गृह से सच्चे ईश्वर की खोज में युवावस्था में निकले थे। उनकी बहिन की मृत्यु होने पर मृत्यु के डर ने उन्हें सताया था। ईश्वर की खोज करते हुए वह मथुरा में प्रज्ञाचक्षु गुरु स्वामी विरजानन्द सरस्वती की कुटिया में जा पहुँचे थे जहाँ उन्हें वह सब कुछ मिला जिसकी खोज वह 14 वर्ष की आयु से कर रहे थे। **उन्होंने न केवल ईश्वर के सत्य स्वरूप को ही जाना था अपितु इसके साथ ईश्वर द्वारा प्रदत्त वेदों के ज्ञान के बारे में भी अनेकानेक रहस्यों को जाना था जिसे उन्होंने सारी दुनिया के लोगों के साथ बाँटा (share) किया।** अध्ययन, अनुसंधान, विचार, चिन्तन, ईश्वर में धारणा, उसका ध्यान व समाधि की उपलब्धि से भी **उन्हें इस संसार के प्रायः सभी रहस्यों का ज्ञान हुआ था जो कि संसार में कोई मनुष्य अधिक से अधिक कर सकता था।** इस कारण हम अनुभव करते हैं कि संसार के ज्ञात सत्य के आग्रही महापुरूषों में वह ''न भूतो न भविष्यति'' हैं। यह बात हम सीमित अर्थो में कह रहे हैं। ऐसा नहीं है स्वामी दयानन्द से पूर्व उन जैसा कोई महापुरूष उत्पन्न ही नहीं हुआ। ऐसे अनेकों महापुरूष हो सकते हैं परन्तु उन अज्ञात महात्माओं को छोड़कर, ज्ञात महापुरूषों में महर्षि दयानन्द अनूठे व अनुपमेय हैं।

महर्षि दयानन्द की संसार तथा विश्व मानवता को अनेक देनों को मानवमात्र को प्रदान करने में उन्होंने स्वदेश व परकीय देशवासियों का किंचित् भी पक्षपात नहीं किया। यह बात भी उन्हें महर्षि, महामानव व महापुरूष बनाती है। उनकी सबसे बड़ी देन है- वेदों की खोज, वेदों की रक्षा, वेदों का प्राचीन ऋषि व आर्ष परम्परानुसार वेद-भाष्य, वेदों का प्रचार, सत्यार्थप्रकाश का प्रणयन व उसे संसार भर में सबके उपकार के लिए प्रस्तुत करना, संस्कारों के लिए संस्कार विधि की रचना व संस्कारों का महत्त्व प्रतिपादन करना आदि। **सत्यार्थप्रकाश व उनके सभी ग्रन्थ उनकी मानवता को स्थाई देनें हैं।** इसके लिए सारा संसार उनका ऋणी है। यह बात अलग है कि अभी तक संसार उनके उपकारों को समझ नहीं पाया है और मतों के आग्रही देशी व विदेशी बन्धु उन्हें सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। यह उनकी अज्ञानता व कुछ का स्वार्थपूर्ण दृष्टिकोण है। ऋषि की मान्यताओं व सिद्धान्तों को अपनाकर ही न केवल भारत अपितु सारे विश्व का कल्याण होगा, सर्वत्र सुख शान्ति होगी और **''वसुधैव कुटुम्बकम्''** की उदात्त भावना सिद्ध व पूर्ण होगी। इसी प्रयोजन की पूर्ती के लिए महर्षि दयानन्द ने 10 अप्रैल, सन 1875 ई. को मुम्बई-भारत में आर्य समाज की स्थापना की थी। आर्य समाज को देश व विदेश में पूर्ण सत्य वैदिक धार्मिक मान्यताओं का प्रचार तीव्र गति से करना है। हम सबको मनोवैज्ञानिक चिन्तन करके यह जानना है कि कैसे संसार के लोगों को वैदिक दृष्टि व सत्य सिद्धान्तों से परिचित कराकर उन्हें स्वीकार कराया जा सकता है यही आर्य समाज के सामने भीष्म कार्य व उद्देश्य है जिसकी पूर्ती की जानी है। इसका दायित्व आर्य समाज के प्रत्येक सदस्य पर है परन्तु हमारे अधिकारियों, संन्यासियों, नेताओं और विद्वानों पर सर्वाधिक है। उन्हें प्रलोभनों से बच कर पूरी निष्ठा व समर्पित होकर पूर्ण निष्पक्ष व स्नेहसिक्त भाव से कार्य को करना है, तभी वे महर्षि दयानन्द के सच्चे शिष्य, अनुयायी कहने व कहलाने के अधिकारी होंगे।

विदेशों में हमारे जो बन्धु रहते हैं व उनमें आर्य समाज से जुड़ कर जो अपने जीवन में आर्य समाज के विचारों व मान्यताओं को स्थान देते हैं वह हमारे लिए प्रशंसा व बधाई के पात्र हैं। आर्य समाज, ह्यूस्टन के स्थापना दिवस का दो दिवसीय समारोहपूर्वक आयोजन करना प्रशंसनीय है। **इस अवसर पर यह विचार करना प्रासंगिक एवं आवश्यक है कि महर्षि दयानन्द के मिशन को वहाँ कैसे फैलाया जाए व उसे सर्वस्वीकार्य बनाया जाए। ''जहाँ चाह वहाँ राह''** का वाक्य हम प्रायः सुनते व प्रयोग करते रहते हैं। अतः समारोह में उपस्थित सभी बुद्धिजीवी कुछ क्षण इस विषय पर अवश्य विचार करें और वेद प्रचार की कोई प्रभावशाली योजना को बनाएँ। उस योजना को ईमेल पर संसार के सभी आर्य समाजों, विद्वानों व सभाओं आदि को भेजा जाए जिससे सभी लोगों के सुझाव इस महत कार्य के लिए प्राप्त हो सकें और फिर उत्तम विचारों व सुझावों का संशोधित योजना में समावेश कर ''वेद प्रचार योजना'' को अन्तिम रूप दिया जाए। **हम** समझते हैं कि सबसे अधिक बल हमें अपने आचरण पर देना है। यही सबसे बड़ा वेद-प्रचार हमें दिखाई देता है। आज हमें हमारे अनेक विद्वानों, संन्यासियों व प्रचारकों का आचरण वैदिक धर्म के सिद्धान्तों व मान्यताओं के अनुरूप दिखाई नहीं देता। सभी को आत्म चिन्तन करके स्वयं के आचरण को ठीक करना है। इसके लिए सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण तो यह है। कि हमें अपने जीवन से प्रलोभन, इच्छाओं व महत्त्वकांक्षाओं का त्याग करना होगा। येन-केन-प्रकारेण धन संग्रह के लोभ से बचना होगा। सबके प्रति प्रीतिपूर्वक, धर्मानुसार व यथा योग्य व्यवहार करना होगा। इस पर आज से ही आचरण करना आरम्भ कर देना चाहिए। हमें लगता है कि विश्व में वेद प्रचार के लिए यह सबसे अधिक आवश्यक है।

धर्म वेद वर्णित सत्य व सद्गुणों को धारण कर उनके अनुरूप आचरण व व्यवहार को कहता है। वेद व सत्यार्थप्रकाश आदि ग्रन्थों से धर्म व सत्य को जाना व समझा जा सकता है। आइए, हम सत्यार्थप्रकाश व वेद के नियमित स्वाध्याय का व्रत लें और अपने जीवन में पंचमहायज्ञों को करते हुए उसे पूर्णतया वैदिक मर्यादाओं के अनुरूप बनाएँ। इस शुभ अवसर पर हम आर्य समाज, ग्रेटर ह्यूस्टन के सभी अधिकारियों व सदस्यों को अपनी शुभकामनाएँ एवं बधाई देते हैं।

196 चुक्खूवाला-2
देहरादून-248001

☞ पृष्ठ 04 का शेष

श्रद्धा, अभ्यास एवं वैराग्य...

में होगा, स्वर्ग-प्राप्ति, विदेह बनने की इच्छा और प्रकृतिलय-योगी बनने की कामना आदि। इस प्रकार लौकिक रागोत्पादक भोगों तथा यज्ञादि से प्राप्त सुखों एवं योग-सिद्धिजन्य सुखों के दोषों को भी जिसने जान लिया है और विवेकज्ञान के कारण जब इन सुखों में किसी प्रकार की आसक्ति नहीं रहती, उस राग-द्वेष शून्य स्वाधीनतानुभति को वैराग्य कहते हैं। अगले सूत्र में कहा है-**तत्परं पुरुषख्यातेर्गुणवैतृष्ण्यम्।।** (यो.द. 1-16) महर्षि व्यासजी ने इस सूत्र का भाष्य कुछ इस प्रकार किया है-देखे हुए एवं सुने हुए विषयों के दोषों को देखने वाला तृषारहित साधक, पुरुष के दर्शन के अभ्यास से, उस पुरुषत्व के बोध से प्राप्त ज्ञान से तृप्त चित्त वाला होकर, स्थूल और सूक्ष्म स्वरूप वाले गुणों से भी विरक्त हो जाता है। वह दो प्रकार का वैराग्य है-अपर तथा पर। इनमें से जो पश्चात् कहा है वह उच्चज्ञान की कोटि वाला है। जिसके उदित होने पर आत्मदर्शी योगी यह मानता है कि प्राप्त करने योग्य प्राप्त हो गया। नष्ट करने योग्य क्लेश नष्ट हो गए और श्रृंखलाबद्ध संसारचक्र टूट गया। जिसके टूटे बिना जीव जन्म लेकर मरता एवं मरकर जन्म लेता रहता है। ज्ञान की पराकाष्ठा (ऊँची स्थिति) ही वैराग्य है। यह वैराग्य कैवल्य का अनिवार्य साधन है। क्योंकि-**विरक्तस्य हेयहानमुपादेयोपादनं हसंक्षीरवत्।।** (सां.द. 4-23)-त्याज्य का त्याग और ग्राहय का ग्रहण (विरक्तस्य) वैराग्युक्त को होता है, हंस के द्वारा ग्राहय दूध के समान, न **भोगाद्रागशान्तिर्मुनिवत्** (सां.द. 4-27)-भोगने से इच्छाओं का शमन नहीं होता, मुनि के समान। इस प्रकार भोगों से दोष रखने से ही वैराग्य होता है-**दोषदर्शनादुभयोः।।** (सां.द. 4-28), सर्ग-रचना के मुख्य प्रयोजन अपवर्ग के प्रसंग में इसी दर्शन में कहा गया है कि-**विरक्तस्य सिद्धेः।।** (2-2) अर्थात् केवल सर्गरचना से मोक्ष-प्राप्ति की संभावना नहीं है बल्कि जिसे वैराग्य हो जाता है, वही अध्यात्म मार्ग पर अग्रसर होकर समाधि-लाभ द्वारा मोक्ष को प्राप्त होता है।

महर्षि दयानन्द धाम, महादेव, सुंदरनगर,
जिला मंडी, हि.प्र.-174401

thearyasamaj.org

महर्षि का वास्तविक जीवन-दर्शन

● खुशहाल चन्द आर्य

यह लेख मैंने आदरणीय डॉ. महेश जी विद्यालंकार द्वारा लिखित "ऋषि दयानन्द की अमर गाथा" शीर्षक पुस्तक से उद्धृत किया है। इस पुस्तक में महेश जी ने महर्षि के गुण, कर्म स्वाभाव पर इतनी सुन्दर विवेचना की है, जिसको पढ़कर अति प्रसन्नता तो होती ही है, साथ ही महर्षि के व्यक्तित्व व कर्तव्य की भी पूरी जानकारी हो जाती है। इस पुस्तक को पढ़कर आर्य समाजी तो अति हर्षित होता ही है, यदि इसको कोई विरोधी विचार रखने वाला व्यक्ति भी पढ़ ले तो वह इतना अधिक आकर्षित होगा कि वह बार-बार इस पुस्तक को पढ़ने की इच्छा करेगा। यह पुस्तक केवल 26 पृष्ठों की है, मेरी इच्छा होती है कि यह पूरी पुस्तक ही पाँच-छह लेखों में उद्धृत कर दूँ, पर दो-तीन लेख तो मैं अवश्य ही लिखूँगा जिससे सुधी पाठक गण इसकी सरसता का आनन्द उठा सकें। प्रथम लेख इस भाँति है:-

सदियों के बाद इस धरती को ऋषि दयानन्द के रूप में ऐसा महापुरूष मिला, जिसने जीवन तो 59 वर्ष का प्राप्त किया, परन्तु कार्यकाल का जीवन केवल 10 वर्ष का ही रहा, इतने अल्प समय में ही उन्होंने अपने व्यक्तित्व और कृतित्व के आलोक से संसार को चमत्कृत कर दिया। सोई हुई मानव जाति को जीवन जीने का सच्चा, सीधा तथा सरल मार्ग दिखा गया। प्रत्येक क्षेत्र में, ऋषि ने वेदसम्मत, सत्य, वैज्ञानिक, व्यावहारिक तथा उपयोगी मार्ग दर्शन दिया। उनका संकल्प था – "ऋतं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि, सत्यं वदिष्यामि" इस व्रत को उन्होंने जीवन भर निभाया। उन्होंने "सत्यमेव जयते" अन्त में सत्य की ही विजय होती है, इस वाक्य को जीवित रखा। उन्होंने सत्य की रक्षा के लिए जहर, ईंट-पत्थर, गालियाँ न जाने क्या-क्या जुल्म नहीं सहे, मगर सत्यपथ से कभी विचलित नहीं हुए। प्रायः लोग धारा के साथ बहते हैं, परन्तु ऋषि ने धारा के विपरीत चलने का मानों प्रण कर रखा था। देश, धर्म और समाज की परिस्थितियाँ ही कुछ ऐसी थीं, जिसमें गलत बातों से समझौता करके चलने से काम बनने वाला नहीं था। इसलिए ऋषि का सम्पूर्ण जीवन मुसीबतों कष्टों, बाधाओं और विपरीत परिस्थितियों में निकला। मगर स्वामी जी कभी निराश, हताश और दुःखी नहीं हुए। सच है कि :-

सदियों तक इतिहास न समझ सकेगा।
तुम मानव थे या मानवता का महाकाव्य।।

ऋषि का व्यक्तित्व एवं कृतित्व चुम्बकीय था। जो भी उनके सम्पर्क में आया, उसी का कायाकल्प हो गया। न जाने कितने गुरूदत्त, श्रद्धानन्द, हंसराज, लेखराम आदि जीवनों को उन्होंने सन्त, महात्मा व परोपकारी बना दिया। इतनी प्रेरक, आर्कषक तथा जादुई शक्ति और किसी महापुरूष में नजर नहीं आती। लोग तलवार लेकर आए शिष्य बनकर गए। जिसने भी उन्हें देखा, सुना और सम्पर्क में आया, उसी पर उनका जादू चल गया। जिधर से निकले, उधर ढोंग, पाखण्ड, अज्ञान, अन्धविश्वास को मिटाते हुए सत्यधर्म की रोशनी फैलाते गए। वह निर्भीक, ईश्वरविश्वासी, योगी, संयासी, संसार में बुराईयों, कुरीतियों, गुरुडम, ढ़ोंगी, महन्तों, सन्तों आदि के विरूद्ध अकेला चला, लड़ा और विजयी हुआ।

ऐसा देवपुरूष इतिहास में न मिलेगा, जिसने अपना सर्वस्व मानवता के कल्याण, उत्थान तथा मंगल में लगा दिया हो। अपने लिए न कभी कुछ चाहा, न माँगा और न संग्रह किया। जीवन भर जहर पीया, पत्थर खाए, अपमान सहा, बदले में अमृत लुटाता रहा। संसार के महापुरूषों में किसी न किसी प्रकार का कोई न कोई दोष रहा है। पवित्रात्मा ऋषि दयानन्द के जीवन में आदि से अन्त तक किसी प्रकार की सांसारिक त्रुटि, दोष तथा दुर्बलता न थी। हीरे के समान उनका जीवन सभी ओर से चमकता था। उन्होंने लोभ और भय को जीता हुआ था।

प्रसिद्ध एकलिङ्ग की गद्दी को ठुकराने में उन्हें एक क्षण भी नहीं लगा। राजा ने कहा- स्वामिन्! सोच लो, इतनी धनसम्पदा की गद्दी देने वाला तुम्हें कोई न मिलेगा। स्वामी जी ने एक क्षण भी नहीं लगाया और बोले – राजन्! तुम भी सोच लेना, इतनी धन-वैभव की गद्दी को ठुकराने वाला तुम्हें कोई और फकीर भी न मिला होगा। यह उनके स्वभाव का प्रेरक उदाहरण है। वे चाहते तो अपार सुख-वैभव साधनों में जीवन गुजार सकते थे। मगर उस महायोगी ने जीवन भर अपने लिए कुछ चाहा ही नहीं। सांसारिक सुख-भोग, सम्पदा आदि उनके लिए तुच्छ थी।

जर्मन विद्वान मैक्स मूलर से किसी ने पूछा-आप उन्नीसवीं शताब्दी की सबसे बड़ी उपलब्धि, चमत्कार तथा उल्लेखनीय घटना क्या मानते है? उन्होंने कहा – मैं इस शताब्दी का सबसे बड़ा चमत्कार व महत्त्वपूर्ण उपलब्धि यह मानता हूँ – ऋषि दयानन्द का संसार के सामने वेदों का यथार्थ स्वरूप प्रस्तुत कर देना। वेदों का आम जनता से सम्बन्ध जोड़ देना। वेदों को पढ़ने-पढ़ाने का सभी को अधिकार है, इस मान्यता को स्थापित करना जिसे महाभारत के पश्चात् अन्य कोई नहीं दे सका। यह निर्विवाद सच है कि ऋषि दयानन्द ने वेदों द्वारा किया है। उन्होंने संसार को संदेश दिया है कि वेदों की ओर लौटो। मेरी नहीं वेदो की मानो।

वेद ज्ञान परमेश्वर का आदेश, उपदेश तथा संदेश है वेद सबके लिए और उसे सबको पढ़ने का अधिकार है। वेद ज्ञान ही आज के जीवन और जगत् को विश्वशान्ति, विश्वबन्धुत्व एवं मान्यता की शिक्षा तथा प्रेरणा दे सकता है। "वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है इस सत्य को स्थापित करने के कारण ऋषि सदा अमर रहेंगे। स्वामी जी ने संसार को वेदज्ञान के बारे में वैज्ञानिक सोच व दृष्टि दी। यह अपने में महान योगदान है। वेदों के बारे में तरह-तरह की फैली भ्रान्तियों का तर्क, प्रमाण और वैज्ञानिक अर्थ देकर उत्तर दिया। ऋषि ने स्पष्ट किया-भूत-प्रेत, फलित ज्योतिष, ग्रह-नक्षत्रों का प्रभाव, पशु बलि, मांस-मदिरा का सेवन आदि कल्पित बातों का वेदों से कोई सम्बन्ध नहीं है। बाद में मध्यकाल में इन मिथ्या बातों की वेदों में मिलावट की गई।

संसार के ऊपर ऋषि दयानन्द के प्रत्येक क्षेत्र में अनन्त उपकार हैं। कोई ऐसा क्षेत्र नहीं है, जिस पर उन्होंने सत्य, यथार्थ, प्रेरक और व्यावहारिक प्रकाश न डाला हो। स्वयं गुहस्थी न होते हुए भी उन्होंने संसार को मानव-निर्माण की कुजी "संस्कार-विधि" दी। संस्कारों से ही आचार-विचार एवं जीवन का निर्माण होता है। आज मानव समाज में तेजी से संस्कार हीनता फैल रही है। इसी कारण सच्चे अर्थ में मानव-मानव नहीं बन पा रहा है। जब तक मानवीय गुणों से युक्त मनुष्य नहीं बनेगा, तब तक धरती पर सुख-शान्ति, प्रसन्नता, सन्तोष, भाईचारा आदि नहीं बनेगा।

महात्मा गांधी रोड़ (दो तल्ला)
कोलकता-700007
फो. : 22183825, 64505013, ओ.: 26758903, 033

चुनाव समाचार

आर्य समाज मन्दिर न्यू रोहतक रोड, नई दिल्ली

1.	श्री वागीश शर्मा ईसर	–	प्रधान
2.	श्री वेदपाल शास्त्री	–	मंत्री
3.	श्री दिनेश मल्होत्रा	–	कोषाध्यक्ष

आर्य समाज नकुड़ (सहारनपुर)

1.	श्री अम्य सिंह सौनी	–	प्रधान
2.	श्री पंकज कुमार गोयल	–	उपप्रधान
3.	श्री भूपेन्द्र कुमार गोयल	–	मंत्री
4.	श्री हरिदत्त आर्य	–	कोषाध्यक्ष
5.	श्री उमेश कुमार आर्य	–	पुस्तकाध्यक्ष

आर्य समाज –बीसलपुर

1.	श्री विजय कुमार	–	प्रधान
2.	श्री बाबूराम	–	उपप्रधान
3.	श्री डॉ. सत्येन्द्र कुमार	–	मंत्री
4.	श्री भूपराम आर्य	–	कोषाध्यक्ष

thearyasamaj.org

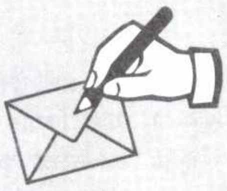

पत्र/कविता

दोहे

धन दौलत रिश्ते सभी , सब पीछे रह जाय।
कर्म फलों की पोटली , साथ सभी के जाय।।

ज्ञान पूर्वक कर्म कर , वही भक्ति कहलाय।
नाम रटते रहने से , ईश्वर कब मिल पाय।।

क्यु भाग्य को कोसता , उस पर दोष लगाय।
करमों का फल तो सदा , भाग्य ही कहलाय।।

ज्ञान पूर्वक करम हो , वही भक्ति कहलाय।
ज्ञान करम भक्ति मिलें , योग मार्ग बन जाय।।

बिना तेल दीपक बुझे , अंधकार हो जाय।
कर्म हीन कैसे जिये , मृत्यु गति ही पाय।।

सबसे अच्छा काम वह , सबके हित का होय।
सवारथ में बुरा करो , उससे अधम न कोय।।

देह दे दी देही को , मन्दिर उसका मान।
साधन का उपयोग कर , सत्कर्म पूजा जान।।

सेवा और त्याग से , मिल जाते अधिकार।
कर्तव्य बिना अधिकार , मांगे तू बेकार।।

त्याग पूर्वक भोग कर , ईश्वर सब कुछ देत।
अपना जान मोह करे , यही दुखों का हेत।।

सत्य दान करम क्षमा , धीरज और ज्ञान।
कभी न इनको छोड़ना , अपना लेना मान।।

नरेन्द्र कुमार आहूजा 'विवेक'
पंचकूला (हरियाणा)

क्या जनप्रतिनिधि देश की अखण्डता और राष्ट्र धर्म की रक्षा करेंगे

16 मई 2014 को देश के पटल पर नया सूर्य उदय हुआ जिसकी कल्पना शायद किसी ने भी न की हो। भारत की अंखण्डता को जो खतरे में बता रहे थे वह मौन हो गए। भारत में नये लोक तंत्र का आगमन हो गया? यह सर्वविदित है कि देश में मई माह सबसे गर्म होता है। ज्यादातर क्षेत्रों में 'अमलतास' और 'गुलमोहर' अपनी आभा विखेरते हैं तथा उतरी भारत के अधिकांश भागो में आम फल की भीनी–भीनी खुशबू फैल रही होती है। वातावरण में प्रातःकाल में कोयल की मीठी–सुरीली आवाज़ अनचाहों को भी अपनी ओर आकर्षित कर लेती है। क्या इसी श्रृंखला में देश की सर्वोच्च पंचायत के लिये नव निर्वाचित जन–प्रतिनिधि अपनी कार्य शैली और विद्वता से देश के एक सौ पच्चीस करोड़ नागरिकों को विकास के सर्व आयाम स्थापित कर नया संदेश देंगे। क्या जिस प्रकार तेज आंच में सोना (गोल्ड) तप का निखरता है उसी प्रकार यह नवनिर्वाचित जन प्रतिनिधि देश की अखण्डता और राष्ट्र धर्म की रक्षा करने का प्रयास करेंगे।

आज देश को सरदार बल्लभ भाई पटेल, स्व. लाल बहादुर शास्त्री जैसे नायकों की परम आवश्यकता है। प्रत्येक देशवासी आगामी छः माह तक इन नव निर्वाचित जन प्रतिनिधियों से सकारत्मक संदेश की कामना करता है और समस्त जन प्रतिनिधियों को उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हैं। और विश्वास करता है कि विश्व पटल पर भारत का मस्तक सर्वदा ऊंचा रहेगा।

कृष्ण मोहन गोयल
113–बाज़ार कोट अमरोहा

****

आवाज़ गाँव-गाँव में पहुंची है

आपने सम्मानित व लोकप्रिय 'आर्यजगत' के जून 22 में 2014 के अंक में कन्याभ्रूण हत्या पर डॉ. तारा सिंह का साक्षात्कार ''लड़कियों की संख्या में गिरावट''–प्रकाशित करने की कृपा की, हार्दिक धन्यवाद।

ऋषि दयानन्द की शिक्षाओं पर चलने वाले डॉ. तारासिंह मूर्तिपूजा व बलि प्रथा वाले पिथौरागढ़ के विभिन्न विद्यालयों में इसका बड़ी निर्भीकता से खण्डन करते हैं। यहाँ तो आर्यसमाज का कोई विशेष प्रभाव नहीं है। आर्यसमाज के मंचों व विद्यालयों में बोलना आसान है, पिथौरागढ़ में बड़ा कठिन। स्वामी कच्चाहारी जी अवश्य वैदिक सिद्धातों के प्रचार प्रसार में लगे हैं। डॉ. तारा सिंह मांसाहार, व कन्या भ्रूण हत्या के विरुद्ध जिस तरह कार्यरत है, यहाँ का मीडिया भी पूरा साथ देता है। यह आवाज गाँव–गाँव में आज पहुँच गई है।

आशा सौन
ग्राम बड्डा, पिथौरागढ़

****

ध्यान क्यों नही लगता?

कुछ सज्जनों का कहना है कि सन्ध्या (ईश्वर भक्ति) करते समय ध्यान नहीं लगता। ध्यान क्यों नहीं लगता इसका कारण है कि धारणा दृढ़ नहीं है। ध्यान लगाने से पहले धारणा बनानी पड़ती है। यदि धारणा पक्की नहीं है तब ध्यान कभी नहीं लगेगा। ध्यान लगाने के लिए धारणा को अटूट बना

धारणा बनती है मन के द्वारा और मन है चंचल। फिर पहले मन को वश में करो। मन बुद्धि के अधीन है। यदि बुद्धि में ही मलिनता भरी हुई है तब मन मनमानी करने में स्वतंत्र हो जाता है। इन्द्रियों के बहकावे में आकर संयम खो देता है। धारणा धरी रह जाती है। फिर ध्यान लगाने का प्रश्न ही नहीं होता

प्रिय बंधुओ! पहले बुद्धि को निर्मल करो! बुद्धि की निर्मलता के लिए शुद्ध सात्विक आहार ग्रहण करो! तामसिक भोजन से बचो जो बुद्धि भ्रष्ट करता है। विद्वानों का सत्संग करो! आर्य पुस्तकों का स्वाध्याय करो। मन को वश में करने के लिए प्राणायाम द्वारा अभ्यास करो। मन में धारणा बनाओ कि ईश्वर उपासना करनी आवश्यक है। धारणा जमते ही ध्यान लगाना संभव हो जाएगा। जैसे प्यासे व्यक्ति की धारणा वानी प्राप्त करने की ओर ध्यान लगा देती है ऐसे ही ईश्वर भक्ति बनाने से ध्यान लग जाता है।

देवराज आर्य मित्र
नई दिल्ली–64

****

thearyasamaj.org

ज्ञानी पिण्डी दास जी

● डॉ. अशोक आर्य

ज्ञानी पिण्डी दास जी अपने समय के आर्य समाज के अच्छे विद्वानों में से एक थे। आप का जन्म रावलपिण्डी (वर्तमान पाकिस्तान) में दिनांक 22 अगस्त सन 1898 ई. में हुआ। रावलपिण्डी की प्रचलित प्रथा ने ही उन्हें पिण्डीदास नाम दिया। माता परमेश्वरी देवी तथा पिता पं सोहनलाल भारद्वाज की सुसंतान होने का आप को गौरव प्राप्त था, जो अंगिरस गौत्रीय ब्राह्मण थे।

इन दिनों पंजाब में सिक्ख सम्प्रदाय का अच्छा प्रभाव था तथा गुरुद्वारों में भी शिक्षा देने की व्यवस्था थी, इस कारण आप की आरम्भिक शिक्षा गुरमखी माध्यम से एक गुरुद्वारे में ही हुई। तत्पश्चात् सन् 1901 में आप ने रावल्पिण्डी के स्कूल में प्रवेश लिया। आप ने खूब मन लगा कर शिक्षा पाने का प्रयास किया और आप ने सप्तम कक्षा की परीक्षा उत्तर प्रदेश के एक मिशन स्कूल से उत्तीर्ण की। सप्तम कक्षा के पश्चात आप ने डी.ए.वी स्कूल में आकर प्रवेश लिया तथा यहाँ से नवम कक्षा तक की शिक्षा प्राप्त की। इसके पश्चात आप अमृतसर के खालसा हाई स्कूल में गए तथा यहाँ से मैट्रिक की कक्षा उत्तीर्ण की। पंजाब में उन दिनों भाषा की विशेष योग्यता के लिए कुछ परीक्षाएँ हुआ करती थीं, यह परीक्षा आज भी होती है। आप में भी भाषा की उच्च योग्यता पाने की इच्छा थी। इस कारण आप ने पंजाबी में ''ज्ञानी' तथा संस्कृत की ''प्राज्ञ'' मे दो परिक्षाएँ भी उतीर्ण की ये दानों परीक्षाएँ आगे चल कर आर्य समाज सम्बन्धी लेखन कार्य में अत्यधिक सहायक सिद्ध हुईं। इस प्रकार आपने विभिन्न कक्षाएँ, विभिन्न नगरों से तथा विभिन्न स्कूलों से उत्तीर्ण कीं।

इन दिनों देश में स्वाधीनता लाने के लिए कांग्रेस के खूब आन्दोलन चल रहे थे। आप अभी विद्यार्थी ही थे कि आप को भी देश के लिए अत्यधिक लगाव हो गया तथा कांग्रेस के आन्दोलनों में भाग लेकर देश को स्वाधीन कराने के लिए जुट गए इस मध्य ही गान्धी जी ने असहयोग आन्दोलन का शंखनाद कर दिया। आप ने अपनी शिक्षा की चिन्ता किए बिना आन्दोलन में आगे आकर कार्य करने की योजना बनाई। परिणाम स्वरूप बी.ए. की पढ़ाई बीच में ही छोड़ कर जेल की यात्रा करनी पड़ी।।

शिक्षा पूर्ण होने पर आपने सन 1912 में भारतीय रेलवे में पार्सल क्लर्क के रुप में नौकरी आरम्भ की, जो आप ने सन् 1922 ई. तक की। आर्य समाज से अत्यधिक लगाव हो जाने के कारण तथा स्वाधीन व्यवसाय करने की इच्छा से आपने 1922 में इस पद को तिलांजलि देते हुए नौकरी से त्यागपत्र दे दिया तथा अमृतसर आ गए, जहाँ आपने आर्यप्रेस स्थापित किया। सन् 1922 में स्थापित इस प्रेस के माध्यम से सन् 1960 तक अर्थात् भारत के स्वाधीन होने के पश्चात् भी आप निरन्तर मुद्रण-प्रकाशन के कार्य में ही रहे।

अब तक आर्य समाज में आप को अत्यधिक रुचि होने से आर्य समाज के कार्यों में भी निरन्तर आगे बढ़ कर कार्य कर रहे थे। इस कारण निरन्तर अट्ठारह से बीस वर्ष तक अमृतसर की आर्य युवक समाज का संचालन करते हुए अनेक युवकों को आर्य समाज में लाए तथा उन्हें आर्य समाज के सिद्धान्तों का ज्ञान दिया। आगे चल कर इनमें से अनेक युवक आर्य समाज को समर्पित हुए। आप ने लौहगढ़ अमृतसर की आर्य समाज का भी खूब काम किया तथा इस आर्य समाज के आप न केवल मन्त्री ही रहे बल्कि प्रधान के पद को भी सुशोभित किया। आप ने आर्य समाज के प्रति प्रेम के कारण आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा की सदस्यता प्राप्त की। आपको डी.ए.वी. कालेज प्रबन्धकर्त्री समिति का भी सद्स्य बनाया गया तथा आप की सेवाओं को स्वीकार करते हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा का सदस्य भी बनाया गया।

आप न केवल व्यख्यानों के माध्यम से ही आर्य समाज को आगे बढ़ाने का कार्य करते थे बल्कि लेखन से भी आर्य समाज के प्रचार व प्रसार में लगे रहते थे। इस कारण अनेक लेखों के अतिरिक्त आपने आर्य समाज को अपना लिखित उच्चकोटि का साहित्य भी दिया। इस में महर्षि दयानन्द सरस्वती जी का पंजाबी में संक्षिप्त जीवन चरित, पुराणों तथा वाममार्ग का घनिष्ठ सम्बन्ध महानिर्वाण तंत्र क्या है? इस्लाम कैसे फैला?, महर्षि वर्णन (काव्य में), गौ विश्व की माँ, विविध वैदिक यज्ञ विधान, 1857 के स्वाधीनता संग्राम में महर्षि का योगदान, हमारी भाषा आदि।

इन पुस्तकों के अतिरिक्त आर्य समाज का प्रचार करने के लिए आपने अनेक छोटे -छोटे लेख भी लिखे जिनमें मूर्ति पूजा मत खण्डन,अष्टोतरशतवचनमालिका, नवीन वेदान्त खण्डन, वेद विरोधी अंग्रेजों के पंचमकार, महर्षि के अमृतसर में 127 दिन, हमारी गिरावट के कारण और समाधान, अपने प्रभु से, श्री कृष्ण चरितामृत, नास्तिक मत खण्डन के अतिरिक्त पं. देव प्रकाश अभिनन्दन ग्रन्थ (सम्पादन) आदि।

इस प्रकार जीवन पर्यन्त आर्य समाज का प्रचार व प्रसार करने में व्यस्त रहने वाले इस आर्य नेता का दिनांक 7 सितम्बर 1977 को अमृतसर में ही निधन हो गया।

108- शिप्रा अपार्टमेन्ट, कौशाम्बी
201010 गाज़ियाबाद

☞ पृष्ठ 06 का शेष

मुक्ति का स्वरूप

अनेक लक्षण हैं। इसी प्रकार मुक्ति एक है और उसका एक ही लक्षण या स्वरूप है, जिसका वर्णन वेदों तथा वेदानुकूल आर्ष ग्रन्थों में पाया जाता है।

"सर्वत्र परिपूर्ण ब्रह्म में मुक्त जीव अव्याहत गति से इच्छानुसार विचरण करता है। मुक्ति में जीव स्वतन्त्र, विज्ञान तथा आनन्दपूर्वक मुक्ति का सुख प्राप्त करता है। मोक्ष में भौतिक शरीर तथा इन्द्रियों के गोलक जीवात्मा के साथ नहीं रहते, किन्तु जीव के अपने स्वाभाविक सत्य सङ्कल्पादि शुद्ध गुण और सामर्थ्य रहते हैं।" शतपथ ब्राह्मण में इस स्थिति का वर्णन करते हुए लिखा है-

"श्रृण्वन् श्रोत्रं भवति, स्पर्शयन् त्वग्भवति, पश्यन् चक्षुर्भवति, रसयन् रसना भवति, जिघ्रन् घ्राणं भवति, मन्वानो मनो भवति, बोधयन् बुद्धिर्भवति, चेतयंश्चित्तम्भवत्यहङ्.कुर्वाणोहङ्कारो भवति।"

(शतपथ ब्राह्मण 14।4।2।17)

अर्थात्-जब सुनना चाहता है तब श्रोत्र, स्पर्श करना चाहता है तब त्वचा, देखना चाहता है तब चक्षु, स्वाद की इच्छा में रसना, गन्ध के लिए घ्राण, संकल्प-विकल्प के लिए मन, निश्चय करने के लिए बुद्धि, स्मरण करने के लिए चित्त तथा अहंकार के निमित्त अहंकार रूप अपनी स्वशक्ति से युक्त जीवात्मा मुक्ति में होकर सर्वविध आनन्द की प्राप्ति अपने संकल्पमय शरीर से करता है। इस लोक में जीवात्मा अपने शरीर के माध्यम से इन्द्रियों के गोलक द्वारा अपना कार्य करता है, **किन्तु मुक्ति में अपनी स्वशक्ति-सामर्थ्य से संकल्प शरीर द्वारा सब आनन्द भोगता है।**

मुक्ति में जीव को 24 प्रकार के सामर्थ्य (या शक्ति) प्राप्त होते हैं जिनसे वह मुक्ति में भी आनन्द की प्राप्ति करता है। वे 24 सामर्थ्य निम्न हैं-बल, पराक्रम, आकर्षण, प्रेरण, गति, भीषण (इसके सम्बन्ध में विशेष रूप से आगे लिखा जाएगा), विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्शन, दर्शन, स्वादन, गन्धग्रहण तथा ज्ञान।

मुक्ति से पुनरावृति- मुक्ति में जीव परान्तकाल पर्यन्त ब्रह्म में आनन्द को भोग कर पुनः संसार में आता है। मुक्ति सुख का काल 'परान्तकाल' तक है। 'परान्तकाल' 31 नील 10 खरब तथा 40 लाख वर्षों का होता है। **'ते ब्रह्मलोके ह परान्तकाले परामृतात् परिमुच्यन्ति सर्वे'** (मुण्डकोपनिषद् तथा कैवल्योपनिषद्)।

मुक्ति से पुनरावृति न मानने में अनेक दोष हैं। 1. जीव का सामर्थ्य और साधन परिमित है उसका फल अनन्त कैसे हो सकता है?

1. मुक्ति हेतु ससीम कर्म का फल मोक्ष-सुख असीम या अनन्त अवधि तक नहीं हो सकता।

अतः स्वामीजी लिखते हैं-

"जिनके साधन अनित्य हैं, उनका फल नित्य कभी नहीं हो सकता।" (सत्यार्थप्रकाश, नवम समुल्लास)

सांख्यदर्शनकार कपिल मुनि का मत भी यही है। **'इदानीमिव सर्वत्र नात्यन्तोच्छेदः'** (सांख्य दर्शन 1।159) अर्थात् जैसे इस समय बन्ध और मुक्त जीव हैं, वैसे ही सर्वदा रहते हैं। बन्ध या मुक्ति सदा नहीं रहती।

विशेष- 'सत्यार्थप्रकाश' में मुक्ति में जीव के 24 सामर्थ्य का वर्णन है, उसमें एक भीषण भी है। पण्डित युधिष्ठिर मीमांसक ने सत्यार्थप्रकाश के स्वसम्पादित संस्करण में इस स्थल पर टिप्पणी में यह लिखा है- "यहाँ 'भय' शब्द अधिक उपयुक्त है।" किन्तु मेरी अल्पमति में यहाँ भाषण होना चाहिए। सम्भव है हस्तलेख में भाषण शब्द ही हो या भाषण के बदले भीषण लेख लिपिकर्त्ता से भूलवश लिखा गया (स्खलनवश) हो। शतपथ में 'वदन् पश्यंश्चक्षुः' ऐसा पाठ है। तैत्तिरीयोपनिषद् में **'वाक्पतिः चक्षुष्पतिः'** पाठ है। शांकरभाष्य में **'वाक्पतिः सर्वासां वाचां पतिर्भवति'** यह उल्लिखित है। (स्वामी वेदानन्दजी की टिप्पणी इस स्थल पर द्रष्टव्य है।) मोक्ष में 'भय' की संगति वैसे भी अनर्थक बनती है क्योंकि भय तो दुःखोत्पत्ति का मूल रहेगा। शतपथ तथा तैत्तिरीयोपनिषद् (9। 6। 2) का पाठ 'भाषण' पाठ को ही समर्थित करता है।

मुक्ति

इस प्रकार सभी दुःखों से छूटकर बन्धनरहित सर्वव्यापक ईश्वर और उसकी सृष्टि में स्वेच्छा से विचरना, नियत समय पर्यन्त मुक्ति के आनन्द को भोग के पुनः संसार में आना मुक्ति कहलाती है।

अध्यक्ष, संस्कृत विभाग
रणवीर धनञ्जय स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, अमेठी।

thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11/6066/2012-14
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसैंस नं. U(C)-103/2012-14
POSTED AT N.D.P.S.O. ON 30-31/7/2014
रजिस्ट्रेशन नं. आर० एन० आई० 39/57

DAV INTERNATIONAL SCHOOL, AMRITSAR

CBSE NEW GENERATION SCHOOL

(Directly Managed by DAV College Managing Committee, Chitra Gupta Road, New Delhi)

CBSE-*i*

The only school in Amritsar to hold CBSE-i (International)

An accreditation given by the Central Board of Secondary Education (CBSE)

Bhavpreet Kaur
95.4% (Commerce)
Painting-100, English - 95, Accountancy - 95
Economics - 95, Business Studies - 92

The 6th outgoing Batch of the School

Class XII

Overall Result

Total Students:	204
Above 95 % :	03
Above 90 % :	24
Above 85 % :	54
Above 80 % :	75
Above 75 % :	105
Above 70 % :	134
Above 65 % :	163
Above 60 % :	184

Dhawani Mahajan
95.2% (Commerce)
English - 95

Stuti Khanna
95.2% (Commerce)

Ginika Kumar
94.2% (Commerce)
Painting - 100
English - 95

Mehak Aggarwal
94.2% (Commerce)

Rishab Marwaha
94.2% (Commerce)
Business Studies - 97

Nitish Arora
94.2% (Non-Medical)
Chemistry - 98
Mathematics - 95
Physics - 95

Mayank Gupta
94.2% (Non-Medical)
Informatics Practices- 97
Physics - 95
English - 95

Aakanksha Kapoor
93.8% (Commerce)
English - 95

Abhishek Marwaha
93.8% (Commerce)
Accountancy - 100
Economics- 9 7

Dikshita Razdan
93.8% (Commerce)
Painting - 100
English - 95

Shivam Gupta
93.2%
(Non-Medical)

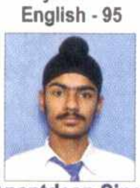

Anantdeep Singh
92.8%
(Non-Medical)
Physics - 95
Mathematics - 95

Gunjan Dua
92.6% (Humanities)
English - 95
Mathematics - 95

Akshay Sharma
92.6%
(Non-Medical)
Physical Education - 97
Mathematics - 95

Mehak Chawla
92%
(Commerce)

Nikhil Gupta
92% (Commerce)
Business Studies-97

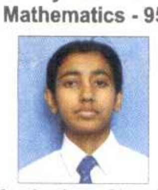

Anshudeep Sharda
91.8% (Commerce)
English - 95

Simran Chopra
91.8% (Commerce)
Mathematics - 95

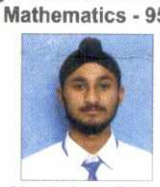

Akashdeep Singh
91.8% (Humanities)
Physical Education - 97
Political Science - 97

Saksham Chopra
91.2% (Commerce)

Shivam Tangri
91% (Commerce)

Chandanbir Kaur
90.8% (Commerce)

Harpreet Kaur
90% (Commerce)
English - 95

Subject Toppers

Subject	Name	Marks
Accountancy	Abhishek Marwaha	100
Painting	Bhavpreet Kaur	100
	Ginika Kumar	100
	Dikshita Razdan	100
Chemistry	Nitish Arora	98
Political Science	Akashdeep Singh	97
Business Studies	Rishab Marwaha	97
	Nikhil Gupta	97
Physical Education	Akashdeep Singh	97
	Akshay Sharma	97
Informatics Practices	Mayank Gupta	97
Economics	Abhishek Marwaha	97
Mathematics	Gunjan Dua	95
	Nitish Arora	95
	Anantdeep Singh	95
	Akshay Sharma	95
	Tanpreet Kaur	95
	Raghav Arora	95
	Jaibir Singh	95
	Parul Mahajan	95
	Beerdwinderdeep Kaur	95
	Simran chopra	95
Phyiscs	Mayank Gupta	95
	Anantdeep Singh	95
English	Bhavpreet Kaur	95
	Gunjan Dua	95
	Dhawani Mahajan	95
	Ginika Kumar	95
	Akanksha Kapoor	95
	Dikshita Razdan	95
	Anshudeep Sharda	95
	Harpreet Kaur	95
	Mayank Gupta	95
	Nitish Arora	95
	Mansimar Singh Kalra	95
	Anusha Mahajan	95
	Roopdeep Kaur	95
	Aditi Mahajan	95

Shri Punam Suri
President, DAV CMC, New Delhi
Vice-Chairman, LMC

Shri J.P. Shoor
Director (PS-I) & Aided Schools
DAV CMC, New Delhi

Dr. V.P. Lakhanpal
Chairman

Dr. (Ms) Neelam Kamra
Regional Director
DAV Public Schools
Amritsar Zone

Dr. K N Kaul
Manager

Anjana Gupta
Principal

मुद्रक व प्रकाशक – श्री प्रबोध महाजन, सभा मंत्री द्वारा मदन गोयल के प्रबंध में अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि., डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित कार्यालय 'आर्य जगत्' आर्यसमाज भवन, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 से प्रकाशित। स्वामित्व – आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, मन्दिर मार्ग, नई दिल्ली–110001 (दूरभाष : 23362110, 23360059) सम्पादक – श्री पूनम सूरी